मैत्रेयी पुष्पा और रीता चौधुरी के उपन्यासों के नारी पात्रों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन

किसी भी कथा के लिए पात्र बहुत ही महत्त्वपूर्ण अंश होता है । बिना पात्र के कथा की कल्पना नहीं की जा सकती है । उपन्यास मानव-जीवन का प्रतिफलन होता है । समाज ही तो उपन्यास की पटभूमि होती है, क्योंकि यही तो यथार्थ है । उपन्यासों में हम अपने आस-पास के चरित्रों व घटनाओं का प्रतिफलन देखते हैं । अतः चरित्र चयन के समय कथाकार को में बड़ी सावधानी बरतनी पड़ती है, ऐसे चरित्रों का चुनाव होना जरूरी है; जो कथाकार के संदेश को पाठकों के दिल तक पहुँचाने में सफल हो सके । चरित्रों की महत्त्व को देखते हुए डॉ भगीरथ मिश्र ने कहा है,

"चरित्र चित्रण के लिए समाज और जीवन का प्रत्यक्ष और विशद अनुभव आवश्यक है । यदि उपन्यास के पात्र उपन्यास के चरित्रों-जैसे ही न लगकर जीवन में देखे-सुने और सम्पर्क में आये व्यक्तियों के समान लगते हैं और उनके साथ ममता, घृणा, द्वेष, सौहार्द, करुणा आदि के भाव स्वतः जागने लगते हैं, तो समझिये कि उपन्यास में सफल चरित्र-चित्रण हुआ है । अतः पात्रों की सजीवता अत्यंत आवश्यक है । उपन्यास पढ़ चुकने के बाद भी पात्र हमारे भीतर अपना प्रभाव डाले रहते हैं और उन्हें हम भूल नहीं पाते ।"[1]

डॉ भगीरथ मिश्र ने उपन्यास के चरित्रों के लिए तीन विशेषताओं का होना जरूरी माना हैं-

- चरित्र का व्यक्तित्व
- उसके बौद्धिक गुण
- उसके चारित्रिक गुण

प्रथम विशेषता के अंतर्गत पात्रों के वेश-भूषा एवं चाल-ढाल आता है; जिससे वह अपने पाठकों के मन में अपना एक 'इमेज'(image)बनाता है । बिना इसके पाठक चरित्र की कल्पना नहीं कर सकता है । अपने रूप-रंग, वेश-भूषा आदि के आधार पर हर एक पात्र पाठकों पर अपना प्रभाव

छोड़ता है । दूसरी विशेषता के बारें मिश्र जी का कथन ही उल्लेखनीय है, "बौद्धिक गुणों के भीतर उसका अध्ययन, चतुरता, संकट में बुद्धि-वैभव आदि की विशेषताएँ आती हैं । इसके लिए उसके गुण यदि लोक-कलयांकारी हुए तो हम सम्मान और प्रशंसा करते हैं और यदि अकल्याणकारी हैं, तो हम निंदा करते हैं । इन गुणों का हमारे ऊपर प्रभाव पड़ता है ।" [2] तीसरी विशेषता का महत्त्व सर्वाधिक माना जाता है । तीसरी विशेषता से ही तो पात्र पाठकों का मन जीत लेता हैं । पात्र की सहनशीलता, संवेदनशीलता, आदि हर प्रकार की मानसिकता का प्रतिफलन यही होता हैं । इससे ही पता चलता है कि पात्र कितने अनुभवी हैं, उसमें कितनी सहन-शक्ति हैं, दूसरों के प्रति उसमें कितनी सहृदयता है, दूसरों के लिए वह क्या क्या कर सकता हैं या फिर अपने राह पर आए मुसकिलों का सामना आखिर वह किस तरह करता है ?- आदि आदि विषय इस विशेषता के अंतर्गत आती हैं और यही किसी पात्र की सबसे महत्त्वपूर्ण दिशाएँ बन जाती हैं ।

मैत्रेयी पुष्पा और रीता चौधुरी दोनों ही कथाकारों की रचनाओं में उपरोक्त लक्षण परिलक्षित होते हैं । उनके पात्र इतने सशक्त और प्रभावशाली है कि वे पाठकों के मन में अमित छाप छोड़ जाते हैं । उपन्यासों के नारी पात्र इतने संवेदनशील है कि उन्हें पढ़कर पाठकों के मन में अपने आस-पास के समाज का चित्र अपने आप उभर आता हैं, उन पर हुए अन्याय को देखकर पाठक का जी भी भर आता है और वे अपने आप उनके दुख में शामिल हो जाते हैं । अब आते है शेली की तरफ, साधारणतः चरित्रों के अध्ययन के लिए दो लियों का सहारा लिया जाता हैं-

(क) विश्लेषणात्मक शैली

(ख) नाटकीय शैली

प्रथम शैली के अंतर्गत कथाकार स्वयं ही पात्र के मन की स्थितियाँ, जहाँ विचार, भाव एवं वृतियों का तटस्थ अध्ययन करते हुए उसका विश्लेषण करते हैं । द्वितीय में अन्य पात्र द्वारा

किसी चरित्र पर प्रकाश डाला जाता है । कथाकार किसी भी पात्र का सही चित्रण करते समय मनोविश्लेषणात्मक शैली को अपनाता है, क्योंकि पात्रों के गुत्थियों को सुलझाना अनिवार्य होता है । इन्हीं मान्यताओं के आधार पर दोनों कथाकारों के उपन्यासों के प्रमुख नारी पात्रों का विश्लेषण प्रस्तुत किया जाएगा ।

5.1. मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों के नारी पात्रों का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन

i. अल्मा कबूतरी:

प्रस्तुत उपन्यास में सबसे अहम भूमिका अल्मा की ही रही है । कथा की नायिका अल्मा है, परंतु कदमबाई यानिकी राणा की माँ भी इस कथा के नायिका पद की हकदार हैं । कथा कदमबाई से शुरू होकर अल्मा तक पहुँचती है । संघर्ष का आरंभ कदमबाई ने किया है, जिसे अल्मा अंत तक निभाती है । इन दोनों के अलावा 'भूरी दादी' का भी कथा के विकास में योगदान रहा है, जिसने सबसे पहले कबूतरा जाति के औरतों को साहसी बनना सिखाया था ।

अल्मा: यह एक ऐसे किरदार नाम है; जिसने सम्पूर्ण कबूतरा जाति के लड़कियों के इतिहास को ही बदलकर रख दिया । एक ऐसी जाति जिसे समाज व सरकार 'अपराधी' की निगाहों से देखते हैं, उस जाति की एक साधारण स्त्री ने अपनी असाधारण व्यक्तित्व के कारण अपना इतिहास खुद लिखा । अल्मा का चरित्र इतनी अधिक सशक्त और प्रभावशाली है कि पाठक उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते हैं । अल्मा के चरित्र की प्रमुख विशेषताएँ कुछ इस प्रकार हैं-

संघर्षशील नारी :

अल्मा में संघर्ष करने की अपार क्षमता थी । उसके व्यक्तित्व का यही गुण पाठकों को बार-बार उसकी ओर खींचता चला जाता है । एक साधारण कबूतरे बेटी की असाधारण जीवन-यात्रा देख हर कोई चकित रह जाएगा । बाल्यावस्था में माँ की ममता से वंचित होनेवाली अल्मा

ने किन मुसकिलों का सामना कर अपने लक्ष को प्राप्त किया हैं, उसका अत्यंत सजीव चित्रण कथाकार ने प्रस्तुत किया है । अल्मा को अपने जीवन के हर कदम पर चुनौतियों का सामना करना पड़ा; पहले माँ की मृत्यु, फिर पिता की हत्या, उसके बाद अपने प्रेमी राणा को जीवन के बीच रास्ते में खो देना; कूल मिलाकर देखा जाये तो अल्मा का सम्पूर्ण जीवन ही संघर्ष बन चुका था । केवल इतना ही नहीं, इन सब के बीच अल्मा को शारीरिक व मानसिक शोषण के शिकार भी बनना पड़ा । इतना सब कुछ हो जाने के बाद भी किसी व्यक्ति का जीने के लिए संघर्ष कर पाना निसंदेह अनुकरणीय दृष्टांत हैं । अल्मा के पास जीने का उद्देश्य था-उसे अपने साथी राणा से मिलना था । हर हाल में वह अपने लक्ष तक पहुँचना चाहती थी; इसी इच्छा ने हिम्मत बनकर उसका साथ निभाया और उसे अपने उद्देश्य में सफलता भी प्रदान किया । आगे चलकर अल्मा की यह संघर्ष-यात्रा अन्य नारियों के लिए प्रेरणा का विषय सिद्ध होगा ।

अत्यंत साहसी :

अल्मा का साहस अपने आप में ही बेमिसाल है । अल्मा ने इसकदर हिम्मत दिखाया था कि कठिन से कठिन परिस्थिति में भी वह अपने मंजिल की ओर कदम बढ़ाती थी । अल्मा जब डाकू श्रीराम शास्त्री के घर में कैद हो गयी थी, तब वहाँ भी उसे शारीरिक शोषण का शिकार होना पड़ा । परंतु इस बार उसने भागने की कोशिश नहीं की, बल्कि आत्मसमर्पण कर दिया था । इसलिए नहीं कि अब वह हार मान चुकी थी, बल्कि इसलिए क्योंकि उसे इस सत्य का आभास हो गया था कि अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उसे हर हाल में जीवित रहना होगा । इस बात को जानते हुए कि हर रोज उसके इच्छा के विरुद्ध एक पुरुष उसके शरीर के साथ खेलेगा, फिर भी उस परिस्थिति का रोज़-रोज़ सामना कर पाना, हर किसी की बस की बात नहीं होती है । इसके लिए अत्यंत साहस की आवश्यकता पड़ती है और अल्मा में यह साहस था । अल्मा ने अपने जीवन के हर मोड़ पर हिम्मत से काम लिया था । जब राणा का बच्चा उसके पेट में मर

गया था, तब भी उसने हिम्मत दिखाई थी । उसने आखिरी समय तक राणा से मिलने का हर सफल किया था ।

शिक्षा के प्रति लगाव:

अल्मा को पढ़ाई से लगाव था । अपने पिता से विरासत में मिली इस आग्रह से वह पीछा न छुड़ा पायी थी । अल्मा अपने पिता के पाठशाला की ही विद्यार्थी थी । अन्य सब विषयों के साथ साथ वह अँग्रेजी भी पढ़ना जानती थी; जो किसी भी कबुतरा के लिए गौरव और हर्ष का विषय रहा होगा । जब अल्मा श्रीराम शास्त्री के यहाँ पहुँची तो उसे मंत्रीजी ने अपने कागजों को पढ़ने में नियोजित कर दिया । अपने बदले की भावना को भूलकर अल्मा उन कागजों के प्रति आकृष्ट होने लगी थी । अपने पिता को याद करते हुए उसने कागजों को पढ़ना शुरू किया था और इसी शिक्षा का फल था कि बदले की भावना रहते हुए भी कभी उसने हिंसात्मक काम नहीं किया । शिक्षा मनुष्य को जोड़ता है; तोड़ता नहीं । शायद इसीलिए अल्मा को बंदी बनानेवाले डाकू श्रीराम शास्त्री के मृत्यु पर उसने शोक मनाया था । जी भर रोयी थी वह; यहाँ तक कि अंतिम संस्कार तक उसने स्वयं किया था ।

इतिवाचक चिंता के अधिकारी :

अल्मा इतिवाचक चिंताओं को लेकर चलती थी । जीवन-यात्रा हर मोर पर उसे मानव रूपी दानवों का सामना करना पड़ा था । उन सब ने उसका शारीरिक और मानसिक रूप से उसका शोषण किया । फिर भी अल्मा ने जीने की उम्मीद नहीं छोड़ी और न ही राणा से मिलने का ख्वाब छोड़ा । राणा से मिलने की आस में वह कठिन से कठिन इम्तेहान देती रही । कभी भी श्रीराम ने अनुमति प्रदान नहीं की, परंतु वह निराश होने के स्थान पर उपाय खोजने लग जाती थी । जब धीरज ने उसे सूरजभान के लोगों से बचाया था, तब से वह यही सोचती थी कि धीरज जैसे साहसी लड़के उसके जैसी लड़कियों को अवश्य ही बचा पाएगा । और सोचती कि,

"धीरज अब भी सूरजभान के मकान की मुँडेर झाँकते होंगे ? उन्होंने अब तक कितनी लड़कियाँ रिहा कर दी होंगी । वे फिर से कहाँ-कहाँ कैद हो गई होंगी ? रिहाई और कैद का सिलसिला लड़कियों के रहते तक चलता चला जाएगा ? चलता चला जाएगा तो कोई धीरज भी साथ-साथ आएगा ।

आएगा...कभी न कभी..."[3]

अल्मा जानती थी कि इस राह में कैद होने वाली लड़कियों की जिंदेगी बहुत पीड़ादायक हैं, फिर भी वह इसी उम्मीद पर जीती रही कि कोई न कोई रास्ता जरूर निकाल आएगा जिससे वह अपने जीवन को दुवारा नई सिरे से सजाने का मौका पा जाएगी । अपनी लक्ष्य के प्रति रहे मोह ने कभी उसे निराशावादी बनने नहीं दिया ।

ईमानदार:

अल्मा के चरित्र का यह एक अत्यंत उज्ज्वल पक्ष रहा है । अल्मा ने कभी किसी को धोखा नहीं दिया; चाहे वह राणा हो या फिर श्रीराम शास्त्री । यद्यपि उसे मजबूरी के खातिर शास्त्री के साथ रहना पड़ा था, उसका अंकशायिनी बनना पड़ा था, किन्तु उसके मन में सदा राणा के प्रति ही प्रेम रहा । उनका संबंध शरीर से ऊपर उठ चुका था । दोनों दूर रहकर भी एक-दूसरे के पास थे; एक-दूसरे का इंतेज़ार कर रहे थे । यदि अल्मा शास्त्री का कहा नहीं मानती तो राणा तक जाने जा रास्ता भी न खोज पाती । राणा से मिलने खातिर उसने सारें अपमान सह लिया । अपने आप को उस ऊँचाई तक पहुँचाया, जहाँ से बिना दूसरे के अनुमति के ही वह राणा के पास पहुँच गई । राणा के प्रति रहे प्रेम ने उसे जीना सिखाया था, सो राणा के बिना अल्मा के लिए इस जीवन कोई मोल न था । किन्तु उसने कभी भी शास्त्री से विश्वासघात नहीं किया । अपितु उसके मृत्यु पर यथोचित कर्मों का पालन किया । जिस व्यक्ति ने उसे उसके मर्जी के खिलाफ़ अंकशायिनी बनाना चाहा था और इसे एकप्रकार से अपने घर में कैद कर रखा था, उसे

अल्मा ने क्षमा कर दिया था । क्योंकि श्रीराम शास्त्री के घर में रहकर उसने जीने का बीजमंत्र सीख लिया था । उसके जीवन को दिशा मिल गई थी, उसका खोया हुआ प्यार लौट आया था ।

मानसिक अंतर्द्वंद:

अल्मा ने प्रत्येक परिस्थिति का साहस से सामना किया था परंतु हर वक्त उसके मन मैं एक द्वंद बना रहता था । वह तन-मन से 'राणा' के प्रति समर्पित थी, किन्तु हालातों के चलते उसे कई लोगों शारीरिक संबंध बना, उस पर अत्याचार हुए । वह यह सोचती थी कि क्या यह सब जानने के बाद राणा उसे अपना पाएगा । दूसरी ओर जब श्री-राम शास्त्री के घर में थी, तब वह बराबर उसे मारने का अवसर खोजती फिरती; परंतु जब भी उसे अवसर प्राप्त होता तो वह सोचती, क्या किसी हत्या कर देने से उसे न्याय मिल जाएगा । इस तरह भिन्न परिवेश में अपने मन से झुझती हुई अल्मा अपनी अस्तित्व को तलाश करती है ।

कदमबाई: कबूतरी का जीवन जीने वाली कदमबाई एक असाधारण व्यक्तित्व की अधिकारी है । उपन्यास के नायिका यद्यपि अल्मा है, फिर भी कदमबाई के चरित्र के बिना यह कथा अधूरी रह जाएगी । क्योंकि कथा कदमबाई से होकर ही अल्मा तक पहुँचती है । 'अल्मा' कबूतरी होकर भी साधारण लोगों के तरह पली-बढ़ी थी, किन्तु कदमबाई के पास न तो शिक्षा थी और न ही साधन । बड़े ही कष्ट से उसने अपना जीवन व्यतित किया था । उसके चरित्र के अध्ययन से निम्नलिखित बातें सामने आती हैं-

ममतामयी:

कबूतरी का जीवन-यापन करनेवाली कदमबाई का पति जंगलिया किसान मंसाराम का दोस्त था । मंसाराम ने कदमबाई के लिए जंगलिया से दोस्ती की थी, उसके मन पर वासना का भूत सँवार था । वह जंगलिया को गलत कामों के लिए उकसाता था और पुलिस उसके पीछे हाथ धोकर पड़ जाते थे । यूँ तो कबूतरे जाति के लोगों को पैदाइसी चोर माना जाता है !! परंतु

जंगलिया भगवान की मूर्ति चुराने के बारें में नहीं सोच सकता था । इस कांड के बाद जब एक दिन जंगलिया अपनी पत्नी से चुपके से मिलने आनेवाला था; मंसाराम ने पुलिस को खबर दे दी और जंगलिया के स्थान पर स्वयं जाकर कदमबाई के साथ सो गया । जब जंगलिया की मौत की खबर कदमबाई को लगी, वह तुरंत समझ गई थी कि यह साजिस मंसाराम का था । अब वह उससे बदला लेना चाहती थी, लेकिन गर्भ में मंसाराम का अंश रह गया था । चाहकर भी वह उस गर्भ नष्ट नहीं कर पायी । आखिर नारी है वह; एक माँ बनने के पथ की यात्री । जीवन के इस अनमोल खुशी से वह अपने आप वंचित न कर पायी । फिर एक बार नारी की सहनशक्ति रंग लायी और उसने मंसाराम को माफ़ी दे दी । ममत्व के आगे बदले की भावना तुच्छ हो गई और कदमबाई ने राणा को जन्म दिया । उसे वह हर खुशी देने का प्रयास किया जो हर माँ अपने बच्चे को देने का प्रयास करती है । राणा को पढ़ाने के उसने बहुत कष्ट किया, और आखिरकार अपने दिल में पत्थर रखकर उसे रामसिंह के यहाँ पढ़ने के भेज दिया । राणा आगे जाकर दूसरा जंगलिया न बने; इसीलिए कदमबाई ने यह कदम उठाया था । कदमबाई की ममता माताओं के लिए प्रेरणादायी है ।

मानसिक अंतर्द्वंद:

कदमबाई का चरित्र सबसे ज्यादा चुनौतीपूर्ण रहा है । एक औरत जिसे अपने कोख में पति के हत्यारे का बच्चा पालना पड़े, उससे ज्यादा मानसिक कष्ट शायद ही किसी ओर पात्र को हुआ हो ! उसका पूरा जीवन इसी दुविधा में बीत गया । कदमबाई न तो मंसाराम से प्रेम कर सकती थी और न ही नफरत; राणा के प्रति रहे प्रेम ने उसे मंसाराम को अपनाने में मजबूर कर दिया था । जिंदेगी के इस दहलीज़ पर खड़ी होकर वह मंसाराम से कहती है,

“मैं तुम्हें भूल जाती तो अच्छा था माते । पर भूलती कैसे, ‘वह रात’ तो जी का जंजाल बन गई । उस रात ने न जंगलिया को भूलने दिया न तुम्हें । उस बैरी को याद कर-करके तुम्हें याद करती रही । इधर छाती सुलगती, तुम्हारी हँसी उठती । राणा गरभ में टंग गया । माँ न होती तो तुम्हें

काट डालती माते । राणा को ही खत्म कर डालती । ...पर उसे खत्म करने से क्या मलाल घट जाता ? सो मेरा जीना-मरना तुम्हारे संग बंध गया । तब जीना नहीं चाहती थी, जीने देना नहीं चाहती थी । अब मरना नहीं चाहती और न तुम्हारा मरण...राणा कैसी बेड़ी बन गया...अटूट बेड़ी... ।" [4]

अपने पति के मृत्यु के उत्तरदायी को पहचानने के बाबजूद कदमबाई कुछ नहीं कर सकी । राणा का प्रकृत पिता 'मंसाराम' है और यही उस समय का सबसे बड़ा सत्य था । इसलिए कदमबाई को न चाहते हुए भी मंसा के करीब जाना पड़ता है । एक तरफ पति का हत्यारा मंसाराम सामने आता है तो उसके मन में नफ़रत की आग सुलगने लगती है । किन्तु दूसरी तरफ जब बेटे का पिता के रूप में मंसाराम सामने होते तो वही नफ़रत दया में परिवर्तित हो जाता है । कैसी अजीब बिडम्बना है ! कदमबाई की मानसिक स्थिति को अत्यंत सूक्ष्म रूप से यहाँ परखा गया है; जिसे पढ़कर पाठक उसके दुख में सहभागी होने पर मजबूर हो जाते है ।

शिक्षा के प्रति आग्रह:

कदमबाई शिक्षा के प्रति आकर्षित थी, यद्यपि कबूतरी जाति के लड़के-लड़कियों को शिक्षा का अधिकार साधारणतः नहीं दिया जाता है, फिर भी कदमबाई ने अपने बेटे को पढ़ाने के लिए कसम खा ली थी । क्योंकि वह उसे अपने या अपने पति के जैसा बनाना नहीं चाहती थी । परंतु कबूतरा बस्ती के लड़कों को स्कूल में भी मानसिक रूप से ज़लील किया जाता था । इसलिए उसने अपने बेटे को अध्यापक रामसिंह के यहाँ भेज दिया था । रामसिंह कबूतरा जरूर था, लेकिन वह शिक्षित था । अनपढ़ होकर भी कदमबाई शिक्षा का मोल जानती थी, उसे पता था कि मनुष्य की जिंदेगी में शिक्षा की कितनी अहम भूमिका होती है । राणा को विदा करते समय वह कहने लगी,

“भूल जाना रे कि तेरी अम्मा कबूतरी है । मद डालने का काम करती रही है और अब मद के मालिकों की मजूरी करती है । मत याद करना कि तेरे बप्पा पुलिस के हाथों...कि गाँव के ही लोगों ने...अब तेरी जिंदेगी बदल रही है बेटा...”[5]

ii. विजन:

विजन उपन्यास के दो प्रमुख नारी पात्र क्रमशः डॉ. आभा और डॉ. नेहा हैं । इसके अलावा नेहा की माँ यहाँ गौण पात्र के रूप में सामने आती है । तीनों नारियों की मानसिक स्थिति एक-दूसरे से भिन्न है और भिन्न होना स्वाभाविक भी है ।

डॉ आभा: डॉ. आभा एक बेहतरीन और काबिल डॉक्टर रही है, अपने लगन और आत्मविश्वास के दम पर ही उसने अपना व्यक्तित्व का महल खड़ा किया था । जो किसी के तानों या गलत इरादों पर नहीं चलती थी...स्पष्टवादी मनोभाव के अधिकारी आभा को लोग काफी हद तक नापसंद भी करते थे, किन्तु उसे इन बातों की परवाह नहीं थी और वह अपने प्रियजनों को आगामी विपदाओं के बारें में अक्सर सचेत कर देती थी ।

आत्मविश्वास की भावना:

डॉ. आभा प्रबल आत्मविश्वासी तथा प्रतिभासम्पन्न डॉक्टर थी । अपने विद्या का सही-प्रयोग वह जानती थी । उसे खुद पर तथा अपने काम पर अत्यंत भरोसा था । सरकारी मेडिकल कॉलेज के सीनियर डॉक्टरों द्वारा तिरस्कृत होने के समय उसे गुस्सा जरूर आ रहा था परंतु वह निराश नहीं हुई थी । क्योंकि उसे यह पता था कि कही न कही तो उसे गुजारा मिल ही जाएगा । इसी आत्मविश्वास के चलते आभा ने अपने पढ़ाई से लेकर जीवन के विविध विपदाओं से अपने को बचाया । उसकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि अन्याय के सामने उसकी ताकत मानो दुगनी हो जाती थी; किसी भी हालत में वह अन्याय स्वीकार नहीं करती थी ।

स्वाभिमानी एवं स्पष्टवादी :

आभा अत्यंत स्वाभिमानी नारी के श्रेणी में आती है । उसने कभी अपने आप से समझोता नहीं किया । जीवन के किसी भी कदम पर उसने अपने आप हीन नहीं समझा और न ही अपने विद्या को अपमानित होने दिया । अन्याय के आगे कभी न झुकनेवाली आभा द्विवेदी ने हमेशा हर गलत कामों का विरोध किया; चाहे वे मामले निजी हो या फिर सामाजिक । अपने पति द्वारा तिरस्कृत होने के उपरांत उसने इस अश्रद्धा व अपमान का उत्तर तलाकनामे से दिया । जिस रिस्ते में सम्मान, विश्वास व प्रेम ही न रहा, उसे पूरी उम्र निभाने का ढोंग आभा से न हो पाया । जिसके परिणामस्वरूप समाज ने उसे अहंकारी, स्वार्थी आदि नामों से सम्मानित किया ! अपने स्वाभिमान के चलते आभा ने दूसरों की गुलामी से अपने अस्तित्व को जिंदा रखना श्रेयकर समझा और यह गलत भी तो नहीं है !! आभा मुकुल को पत्र लिखती है,

"तुम कह सकते हो, हमारे मुल्क में पति अपनी पत्नी को पीट देता है तो नया क्या है? मानती हूँ, तमाम स्त्रियाँ मार खाते-खाते जीवन-यापन करती रहती हैं, मगर मुकुल न तो तुम उन पतियों जैसे जाहिल थे, न मैं ही उन पत्नियों जैसी लाचार...मैं तुम्हारे उस खूंखार पौरुष पुरुषार्थ को झेल नहीं पाई । सारी डॉ. मुकुल ! वेरी सारी ।"[6]

जिज्ञासु:

किसी नए खोज या परिणाम के प्रति डॉ. आभा की उत्सुकता यहाँ उल्लेखनीय है । किसी भी विषय के लिए यह प्रवृत्ति 'गुण' ही मानी जाती है । खासकर चिकित्सा जगत को ऐसे प्रवृत्ति के लोगों की ही अपेक्षा रहती हैं, जो हमेशा कुछ जानने व सीखने के लिए उत्सुक रहते है । यही इच्छा उन्हें नई खोज व तकनीकी की ओर लेकर जाती हैं । डॉ. आभा भी बिल्कुल वैसी ही थी । हमेशा कुछ जानने व सीखने की इच्छा उसके मन को ललचाता है, अपने सहपाठी व जूनियर डॉक्टरों को भी नए नए सर्जरी के लिए प्रेरित करती है । जहाँ कही नई खोज की बात

सुनी, तुरंत वहाँ चली जाती है । डॉ आभा अपने अंदर के ज्योति से प्रकाशमान हो रही थी, जो जाने-अनजाने में दूसरों के राह में भी रोशनी दाल रही थी ।

ईमानदार तथा साहसी:

हर क़ाबिल और सच्चे डॉक्टर की तरह डॉ. आभा भी अपने फर्ज व मरीजों के प्रति ईमानदार थी । वह अपने ड्यूटी को लेकर सचेत थी । शादी के बाद तो इस मसले को लेकर आभा के ससुराल में बबाल मच गया । शुरू में एक बार तो आभा ने अपने सीनियर सर्जन ने माफ़ीनामा लिखा, परंतु अपने कर्तव्य को अनदेखा करने की ग्लानि उसके मन में रह गयी । इसलिए दूसरी बार भी जब उसे ससुराल वालों ने रोकने की कोशिश की तब वह नहीं रुकी । आभा का पति मुकुल भी डॉक्टर था । उसके लिए कोई नियम लागू नहीं था, नियम बस आभा के लिए बने थे । डॉ. आभा का यह स्वभाव उसके ससुराल वालों को रास न आया, लेकिन आभा अपने कर्तव्य की पुकार को अनसुना नहीं कर पायी । वर्तमान समाज को आभा जेसी साहसी नारी की सख़्त आवश्यकता है । जो अंजाम की परवाह किए बिना हर अन्याय व व्यभिचार के खिलाफ डटकर खड़ी हो सके । इसके लिए अत्यंत साहस व आत्मविश्वास की जरूरत पड़ती है । डॉ. आभा में यह सारें गुण मौजूद थे । एक जूनियर डॉक्टर द्वारा अस्पताल में हुए बलात्कार का विरोध करते हुए उसने सीनियर स्टाफ से लेकर पूरे अस्पताल को हिलाकर रख दिया था ।

डॉ. नेहा: डॉ. नेहा का किरदार डॉ. आभा के ठीक विपरीत बैठता हुआ नजर आता है । नारी के आत्मविश्वास को जहाँ आभा के द्वारा सबके सामने आता है, वही डॉ. नेहा का किरदार पाठकों को फिर से निराश करता हैं । उच्च-शिक्षित और उच्चाकांक्षी लड़की का यू ही केवल मात्र 'बहू' बनकर रह जाने से मानों स्त्री की वर्षों की मेहनत पर पानी फेर जाने के समान ही परिलक्षित होती है । कथाकार ने नेहा की मानसिक स्थिति को भली-भाँति समझने का प्रयास किया है । उसके चरित्र को कुछ इस प्रकार विश्लेषित किया जा सकता है-

उच्चशिक्षित किन्तु कुंठित:

नेहा उच्च शिक्षा से अलंकृत तो थी, किन्तु उसके घरवाले दक़ियानूसी सोच के शिकार थे । लड़की पढ़ा तो ली लेकिन उसके भविष्य के बारें फ़ैसला लेने का उसे अधिकार न था । इधर नेहा पर बराबर यह दबाब बना रहा कि माँ-बाप फ़ैसले के खिलाफ़ अगर वह गई तो घर में किसी का मरा हुआ चेहरा उसे देखने होगा । मध्यवर्गीय परिवार की सहज भावनाओं से सिक्त था नेहा का परिवार; कही न कही नेहा के मन में यह बात थी कि वह गरीब घर से है, उसके माँ-बाप ने उसे बहुत मेहनत से पढ़ाया है, इसीलिए वह उनलोगों को दुखी नहीं बना सकती है । वह अपनी मन की बात उनके सामने कभी ठीक से रख ही नहीं पायी; क्योंकि वह सदा अपने ऊपर अहसान का बोझ लेकर जी रही थी । अपने जीवन का फ़ैसला लेना हर व्यक्ति का अधिकार हैं; इसमें स्त्री-पुरुष का भेद नहीं रहता है । नेहा ने अपने अस्तित्व को शुरू ही पहचानने से मानो इंकार कर दिया था ।

आत्मविश्वास का अभाव:

डॉ. नेहा यद्यपि एक अच्छी डॉक्टर थी, लेकिन उसमें आत्मविश्वास का प्रबल अभाव परिलक्षित होता है । पढ़ाई-लिखाई में अबल नेहा जीवन के अनुभवों में सफल नहीं हो पायी । वास्तविकता को देखने-जानने के बाद भी उसके सकारात्मक्ता को स्वीकारने की हिम्मत नेहा में नहीं थी । अपने पक्ष में ख़ुद को कभी खड़ा नहीं कर पाती है डॉ. नेहा... जब उसके सामने शादी का प्रस्ताव रखा गया था, वह उससे मुकर नहीं पाती है । कहीं न कहीं उसे यह डर था कि अगर इसके बाद वह अपनी मंजिल तक नहीं पहुँच पायी; या फिर उसके द्वारा चुना गया लड़का अच्छा न हो...आदि बातों ने नेहा को कमजोर बना दिया । नेहा को अपने आप पर विश्वास न था, न ही उसे अपनी काबिलियत पर भरोषा था, नहीं तो वह अपनी विद्या के दम पर अपना पहचान बना पाती । उपन्यास के अंत में इसी आत्मविश्वास के अभाव से डॉ. नेहा अपना

मानसिक संतुलन ही खो बैठती है । जो व्यक्ति अपने हक के लिए आवाज़ नहीं उठा पाते है वे हमेशा जीवन में पीछे रह जाते हैं ।

अत्यंत भावुक एवं प्रचुर मानसिक अंतर्द्वंद :

डॉ. नेहा साधारण डॉक्टर की तरह नहीं थी, वह अत्यंत भावुक थी । वह मरीज की हालत देख स्वयं दुखी हो जाती थी । अपने पति और ससुर का स्वार्थी और कठोर रूप देख उसका मन संकुचित हो गया; मरीजों के हालातों के लिए वह अपने आप को ही दोषी मानने लगी थी । उसे खेद था कि वह नई तकनीकों को आज़माकर उन्हें राहत दे सकती है, किन्तु उसे वह क्षमता ससुर के आई सेंटर में नहीं मिली थी । जिससे वह अपने आप को हरवक्त लाचार महसूस करती थी । हर बार कुछ करने से पहले वह अपने माँ-बाप का खयाल करती, "उनकी बदनामी होगी"- यह सोचकर अपने हक़ में कोई भी फ़ैसला नहीं ले पाती थी । चाहे शादी से पहले हो या फिर शादी के बाद...दोनों ही अवस्था में नेहा की यही स्थिति नाज़ुक रही । आजीवन अपने आदर्शों का गला घौंटने के फलस्वरूप उसे अपना मानसिक संतुलन खोना पड़ा । जीवन में इस भावुकता और डर के चलते उसे प्रचुर मानसिक अंतर्द्वंद से गुजरना पड़ा था, जब भी उसका परिवार सामने आता तो अपने फर्ज़ के प्रति उसके कदम डगमगाये, जब अपने ज़िम्मेदारी के बारें सोचती है तो अपने आप से नजरें नहीं मिला पाती हैं । आभा की सीख उसकी अतरात्मा को कोसती रहती है; बड़ी भीषण पीड़ा से गुजरना पड़ता था डॉ नेहा को, "नेहा सारा कुछ सोचकर एक बिंदु पर आकर ठहर गयी-कहीं यही अंतर मुझे आभा दी से जोड़े हुए तो नहीं ? शायद...मगर इस समय मैं बड़ी निस्सहाय...क्योंकि मेरी चेतना छटपटाती है, और लालसाओं ने पर फैला लिए हैं।" [7]

साहस का अभाव:

डॉ नेहा न तो साहसी बन सकी और न ही ईमानदार । जो व्यक्ति अपने प्रति ईमानदार न बन सके, वह भला दूसरे व्यक्ति तथा समाज के लिए कैसे ईमानदार बन सकता हैं । नेहा के साथ भी कुछ ऐसा ही था । अपने मत को, अपने विद्या का सही उपस्थापन न कर पाना डॉ. नेहा

की सबसे बड़ी कमजोरी के रूप में नज़र आती है । जीवन में अनेक अवसर प्राप्त होने के बाद भी वह सच्चाई का सामना नहीं कर पाती है । "वास्तव से पलायन करना कायरता की निशानी होती है"- इस सूत्र के ज्ञाता डॉ. नेहा अपने जीवन में इसे लागू नहीं कर पाती है । "अन्याय करना जितना बड़ा जुर्म है, सहना उससे भी बड़ा"- नेहा अन्याय के खिलाफ होकर भी परोक्ष रूप में उसके साथ थी । अपने पति और ससुर के द्वारा मरीजों पर किए अन्यायों के खिलाफ़ उसका मुँह नहीं खुलता था, जीभ मानो फँस जाती थी...अपने बच्चे तथा माँ-बाप और परिवार को अपने ही हाथों उजारने का पाप वह नहीं करना चाहती थी । पर इन सबके चक्कर में वह समाज का नुकसान कर रही थी, इस सत्य का आभास उसे बड़ी देर से हुआ । जब होश संभाला तब पानी सिर से ऊपर बह चुका था ।

डॉ. नेहा की माँ: परम्परावादी भारतीय आदर्श नारी का किरदार अदा करती डॉ नेहा की माँ पाठकों के सामने आती है । उन्हें अपने जीवन से कुछ शिकायत नहीं...किन्तु बहुत सी शिकायतें उनके आँखों में छिपी थी । नेहा को इस बात का इल्म था, वह माँ को समझने का प्रयंत करती, लेकिन वे समाज के भय से चुप रहती । अपने पति के हर बात को मानती और हर अन्याय को सहन करते हुए उनकी गलतियों पर पर्दा दाल देती । माँ अपनी बेटी के जगह पर पति का समर्थन करती हुई नजर आती है, क्योंकि बेटी ब्याह के ससुराल चली जाएगी किन्तु उसे पति के साथ रहना पड़ेगा...इसीलिए पति की खुशी में ही वह अपनी खुशी ढूंढने का व्यर्थ प्रयास करती हुई नजर आती हैं । जबकि पूरी जिंदेगी वह खुश नहीं हो पाती है, जीवन के साथ समझोता करना तो भारतीय नारी को जन्म से ही सिखाया जाता है ।

साहस का अत्यंत अभाव:

नेहा की माँ केवल परम्परावादी ही नहीं बल्कि भीरु भी थी । घर के किसी भी विषय को लेकर सिद्धांत लेने या उसके विषय में कुछ भी कहने की हिम्मत उनमें नहीं थी । हर वक्त बस यही कोशिश रहती कि घर में अशांति न फैले, चाहे गलती पर गलती ही क्यों न दोहराया

जायी...समाज का डर सबसे बड़ा होता है, नेहा की माँ इसी समाज से डरती थी । चाहकर भी वह अपनी एकमात्र संतान की मदद नहीं कर पाती है ।

परम्परावादी सोच के अधिकारी:

इस कथन से संभवतः सभी पाठक सहमत होंगें । सभी इस बात को मानते है कि नेहा की माताजी अपने दक़ियानूसी सोच की वजह से ही नेहा कि मदद नहीं कर पाती है । उन्हें हमेशा ऐसा लगा कि अगर वे नेहा के सपक्ष आवाज़ उठायेगी तो पति व समाज दोनों के विरुद्ध उसे लड़ना होगा, उनके तानों को सुनना होगा । उनमें न तो हिम्मत थी और न ही इनको सहने की शक्ति...नारी को पुरुषों के नीचे ही जीना होगा; इस संस्कार को उन्होंने अपने रग-रग में बसा लिया था और अब नेहा में भी वहीं संस्कार वे दाल रहे थे, 'अन्याय को सहना सीखो बेटी' , अगर तुम उस घर से चले आओगे तो लोग क्या कहेंगे, समाज क्या कहेगा; तुम्हारे पापा की इज्जत तो मिट्टी में मिल जाएगी, आदि, आदि । घुमाफिराकर बात यह बनी कि "जैसा भी है अब वह तेरा ससुराल है, अतः अब तुझे वहीं रहना होगा ।" हमारे समाज माँ यह क्यों नहीं बोल सकती कि "आजा बेटी यह तो तेरा ही घर है, तेरी खुशी ही हमारी खुशी हैं ।" समय परिवर्तित हो रहा है और हम भी उम्मीद का दामन थामें रुकें हैं कि नेहा की माँ की सोच एक दिन बदलेगी और हर माँ अपनी बेटी को अपने घर हक़ से बुलायेंगी ।

iii. इदन्नमम:

इदन्नमम उपन्यास की मूल नायिका मंदा है, और उसकी दादी बउ और माँ प्रेमा भी इस कहानी में सशक्त रूप में उभरी हैं । यें सभी पात्र अपने अपनी अलग दुनिया में जीती हैं, सभी की मानसिक स्थितियाँ अलग हैं । एक दूसरे से अलग, बहुत अलग सोच के अधिकारी इन सभी पात्रों ने मिलकर एक अजीब सा माहौल पैदा कर दिया हैं । तीन पीढ़ियों की इस कहानी में स्त्री के अलग अलग रूप और मानसिकता से पाठक परिचित होते है- वह है कुसुमा भाभी , साथ ही

यहाँ एक ऐसे पात्र का निर्माण हुआ है, जिसका पति नपुंसक है और संतानहीनता का दोष स्त्री के ऊपर थौंप देता है ।

मंदाकिनी: मन्दाकिनी गाँव की सहज-सरल लड़की जो आगे चलकर प्रदेश की राजनीति तक को हिला देने में समर्थ होती है । अपने निर्भीक प्रवृत्ति के चलते वह किसी के आगे झुकती नहीं थी । अपने साहस और दृढ़ लक्ष के कारण ही वह तमाम मुसकिलों का सामना करती हुई अपने लक्ष तक पहुँचने के सफल प्रयास करती हैं ।

साहसी और दृढ़ व्यक्तित्व:

मंदा अत्यंत साहसी लड़की रही है, जितनी साहसी थी उतना ही दृढ़ उसका व्यक्तित्व था । मंदा गाँव की सहज-सरल लड़की के स्थान पर साहसी और दृढ़ मनोबल की नारी है । एक बार जो अपने मन में ठान लेती हैं, वह उसे पूरा करके ही छोड़ती है । वह एक प्रकार से जिद्दी और और हिम्मतवाली लड़की थी । मकरंद से बिछड़ने के बाद जब मंदा सोनपुरा गाँव वापस आती है, तब गाँव के लोग तमाम बातें करने लगे । अभिलाख जैसे बदमाश जिसने उसके पुरखों की जमीन हरप लिया था; उन जल्लादों से मंदा को लड़ना पड़ा था । इलाके का दीवान भी उसीके इशारों पर नाचने वाला पालतू कुत्ता था । लेकिन मंदा कभी उनसे डरी नहीं; क्योंकि उसे इस सत्य का आभास हो गया था कि ऐसे लोग गाँववालों के डर का फ़ायदा उठाकर ही अपना रोब जमाते है । अपने हिस्से का हक़ ईमानदारी से हासिल करने का प्रण लिया था उसने, इसीलिए बिना झुके अपनी फरमाइश दर्ज़ कर आई थाने में, यथा-

पन्ने पलटते हुआ दीवान कहने लगा है, “हमसे क्यों बैर निभा रही हो ? देर लगा दी, इसलिए नाराज हो गई ? अरे, हम माफी माँग लेंगे तुमसे ।”

उठा और मुख पर झुक आया दीवान । होंठो पर होंठ धार दिए और हाथ कंधे से नीचे...

तड़ाक ! तड़ाक ! तड़ाक !

तीन थप्पड़ों की तीन हथगोलीं की आवाज़ गई बाहर ।

महावतसिंह सिपाही दौड़ा आया । दीवान गिरते गिरते बचा, अप्रत्याशित प्रहार के कारण । वह उठी और बोली, "महावतसिंह, अब मैं तभी आऊँगी, जब दरोगाजी आ जाएँगे यहाँ । खबर करना भइया !" मन्दाकिनी आँधी की तरह निकल गई थाने से ।" [8]

अपने पिता जी के सपने को मंदा ने अपना लक्ष बना लिया था । उसके पिताजी जी ने जिस अस्पताल को गाँव में लाने के लिए अपने जान दिया था, वही जाकर बाद में मंदा के जीवन का लक्ष बन गया । मकरंद के जाने के बाद इसी लक्ष के सहारे वह जीती रही । जब वह सोनपुरा लौट रही थी, तभी उसने ठान लिया थी कि एक दिन यह अस्पताल जरूर खुलेगा । मकरंद से बिछड़कर गाँव लौटते समय अस्पताल को देख मंदा के मन में अनेक भाव उमर आए-

"पिता की समाधि यह अस्पताल !..

किसी की कसम है यह चारदीवारी ।

किसी की वादों से बंधा है यह खालीपन । गाँव में, गलियों में, दीवारों पर, शून्य में मकरंद का चेहरा झिलमिलाने लगा।" [9]

मानसिक अंतर्द्वंद:

मंदा बचपन में अपने माँ-बाप को खो देती है । बाप मर जाता है और माँ किसी दूसरे व्यक्ति के साथ विवाह कर लेती है । अपनी दादी के साथ मंदा बड़ी होती है और दादी हमेशा उसे यही समझाने का प्रयास करती कि उसके पिता एक अच्छे इंसान थे और माँ एक बदचलन औरत...मंदा की किशोरवस्था इसी कसमकस में बीती कि वह किसे सही माने ? अपनी माँ या अपनी दादी को...दादी जो उसके पास थी या फिर माँ...जिसके संस्पर्श से वह वंचित थी । दादी का अकेलापन और घर की अवस्था देख वह अपनी माँ को माफ़ नहीं कर पाती है, किन्तु जैसे

जैसे वह आगे बढ़ती है; जीवन का अनुभव उसे प्रेमा के विरुद्ध जाने से रोकने लगी । क्योंकि तब वह एक स्त्री की मनोदशा को अनुभव करने में समर्थ हो चुकी थी । माँ के सुनेपन और अकेलेपन को वह अब महसूस कर रही थी और इसीलिए अपने माँ को मंदा माफ कर देती है ।

एकनिष्ट प्रेम:

मंदा एकनिष्ट प्रेमी रही है । वह मकरंद से प्रेम करती थी, उन दोनों की सगाई भी हो चुकी थी, पर उसके बाद मकरंद की माँ यह सगाई थोड़ देती है और मकरंद को मंदा से दूर ले जाती है । मंदा को बहुत बड़ा धक्का लगा...हालाकि मकरंद वापस आने का वादा करता है; फिर भी मंदा को अकेलेपन ने घेर लिया था । माता-पिता को खो देने के बाद मकरंद को खो देना उसके लिए अत्यंत कष्टदायक रहा । मकरंद के चले जाने के बाद वे भी सोनपुरा लौट आते हैं । कभी भी जब बऊ उससे शादी की बात करती तो, वह दूसरी बात निकाल लेती । उसके दिल में मकरंद के लिए प्यार था, मंदा कभी उसे अलग नहीं हो पायी । बऊ जब भी पूछती, मंदा की तरफ़ से जबाब आता है कि अब तो कभी यदि शादी करेंगी, तो वह सिर्फ और सिर्फ मकरंद से; वरना किसी से नहीं । उसका प्रेम शरीर से ऊपर उठ चुका था । शादी जैसी बातें अब मंदा को दुख देने में असमर्थ रह जाती है । क्योंकि उसे पता है बंधन इंसान को कमजोर बना देती है...और आगे बढ़ने से रोक लेती हैं । मंदा जीवनभर मकरंद से प्रेम करती रही, किन्तु शारीरिक रूप से उसे प्राप्त करने की चेष्ठा नहीं की ।

मानव-सेवा का भाव:

सोनपुरा जैसे छोटे से गाँव की एक अकेली लड़की ने सम्पूर्ण गाँव को बदलने की हिम्मत दिखाया । पूरे गाँव के लोग की मानसिकता को बदलने का प्रयास किया । अपना-पराया न देखनेवाली मंदा ने गाँववासियों को अपने हक़ के लिए लड़ना सिखाया । बिना किसी स्वार्थ के गरीब-दुखी जनों के लिए लड़ती रही । बदमाशों और पुलिस-दीवान आदि के घिनौने नजरों से अपने आप को बचाती रही । अपने गाँव वापस लौटकर अपने घर की दुरवस्था देखकर दादी-

पोती दोनों दुखी हो जाते हैं । ऊपर से उनके खेत पर भी अभिलाख ने कब्ज़ा कर लिया था । इस मुसीबत के क्षण में मंदा ने खुदको और दादी को संभाला । रामायण बाँचती हुई मंदा बऊ से कहती ,

“बऊ, हमने एक किताब में पढ़ा था, जब तक मनुष्य आत्मरत रहता है, अपने दुखों से नहीं उबर पाता । समष्टिगत प्रेम मानव को दुखों के गर्त से बाहर खींचता है ।”[10]

सच ! जिस दिन मनुष्य इस गूढ़ार्थ को समझ ले, इस धरती से हिंसा अपने आप कम हो जाएगी । मंदा ने इस तत्व का मर्म जाना था और इसीलिए व्यक्तिगत दुख को छोड़ गाँववालों के दुखों को मिटाने में लग गई । क्रेशरों के फलस्वरूप हो रहे प्रदूषण को रोकना, गाँव के अस्पताल के लिए लड़ना, आदि मंदा के मानवसेवी रूप का उदाहरण हैं ।

प्रभावशाली व्यक्तित्व एवं आत्मविश्वास की भावना:

अत्यंत प्रभावशाली व्यक्तित्व के अधिकारी मंदा बहुत ही कम समय के भीतर अपने गाँव के साथ साथ आस-पास के गाँव में लोकप्रिय बन गई थी । उसका रामायण वाचन सुनने के लिए दूर दूर से लोग आते और उसे अपने यहाँ भी बुलाते थे । निःस्वार्थ रूप से गाँववालों की सेवा करनेवाली मंदा मानो सबकी उद्धारकर्ता बन गई थी । खेती की समस्या से लेकर प्रदेश की राजनीति की समस्या तक, सभी में गाँववाले मंदा का राय लिए बिना कुछ न करते थे । मंदा को अपनी सुध नहीं थी, उसका प्राण जैसे समस्त गाँव में बसता हैं । जब प्रदेश के नेता निर्वाचन का प्रचार करने गाँव आए थे; तब साधु महाराज ने उनके सामने मंदा का परिचय कुछ इस प्रकार दिया था,

“ हमें तो लगता है, मंदा इस गाँव की नहीं, इस क्षेत्र की भूमिसुता है, जो इस धरती के रग-रग को पहचानती है । जैसे यहाँ के आदमी की धड़कन से चलती है चलती हो उसकी साँसे ।

जरूर मिलिए उससे । यहाँ की जनता मानती है उसको । विश्वास करती है उस पर ।”[11]

मंदा प्रबल आत्मविश्वासी थी । जिसके दम पर सबको यह यकीन दिलाने में समर्थ हुई थी कि एक दिन गाँव में अस्पताल बनेगा, डॉक्टर आएगा और गाँव की तरक्की होगी । उसके इसी आस्था के वजह से ही गाँव में डॉक्टर आया; थोड़े दिनों के लिए ही सही...लोगों को उज्ज्वल भविष्य का राह दिखाया ।

बऊ: बऊ यानिकी मंदा की दादी । यह पात्र भारतीय ग्रामीण नारी जीवन को प्रस्तुत करती है । एक साधारण ग्रामीण समाज की बहू व साँस का सुंदर किरदार निभाती हुई पाठकों की दृष्टि आकर्षित करती है बऊ । अपने जवान बेटे को खो देने का गम वह कभी भुला नहीं पायी, साथ ही अपनी पुरखों की जमीन व खेत के लिए वह मंदा के सहारे अंत तक लड़ती रही । साहसी व दृढ़ मानसिकता उन्हें बुढ़ापे में भी अन्याय के विरुद्ध लड़ने के लिए ताकत प्रदान करती है ।

परम्परावादी मानसिकता:

सम्पूर्ण ग्रामीण तथा भारतीय संस्कारों में पली-बढ़ी मंदा की दादी पुराने खयालातों की थी । अपने बेटे के मौत के गम के साथ साथ उसे इस बात का भी क्षोभ था कि मंदा की माँ ने दूसरी शादी कर ली । बऊ के हिसाब से पति महेंद्र की मृत्यु के बाद 'प्रेमा' को पति के घर विधवा के रूप पूरी उमर काट देना चाहिए था, उसके सभी इच्छाओं को बलि चढ़ाकर मौन बैठती ; हो सके तो राम-नाम के जपन से अपनी विषय-वासनाओं पर संयम रखती । परंतु प्रेमा ने ऐसा नहीं किया और बऊ ने उसे अपने घर, जमीन और जीवन से निकाल दिया । उसने यह नहीं सोचा कि वह अभी जवान है, उसकी जिंदेगी अभी बाकी है; चाहे तो वह दूसरी शादी कर सकती है । यहाँ तक कि उसने प्रेमा की बेटी 'मंदा' को भी अपने पास रखा, बेटे की आखरी निशानी समझकर...

अत्यंत कोमल हृदय:

हर माँ और दादी की भाँति बऊ का अंतर भी बहुत कोमल था, बिल्कुल नारियल की तरह, जो बाहर से कठोर किन्तु अंदर से कोमल होती है । उसने कभी भी मंदा का साथ न छोड़ा । अकेली पोती की चिंता दादी को खाई जाती...वह हरपल यह सोचती कि कैसे मंदा का घर बसाया जाए, कैसे उसके दुख को कम किया जाए ! मकरंद से बिछड़ने का बाद मंदा का योगिनी रूप वह देख न सकी । बऊ मंदा की अवस्था देख अत्यंत दुखी हो गई थी, यथा

"मंदा, हमें कहे की तिसना ? बेटा, हमें कुछ नहीं चाहिए । तेरा बाप नहीं रहा तो तब से सारी मोह-माया काट डाली हमने । हमें तो बस तुम्हारी खुसी चाहिए बेटा...! बऊ रोने लगी।" [12]

दृढ़ एवं साहसी व्यक्तित्व:

वृद्धावस्था में भी बऊ ने मंदा का हाथ नहीं छोड़ा था । लोगों के तानों को सहती पर अपने मन का भाव कभी बाहर प्रकट होने न देती थी । क्योंकि उसे पता है कि कमजोर लोगों पर समाज ज्यादा दबाव डालते है; फिर चाहे वह शारीरिक हो या फिर मानसिक । अपने बेटे के मृत्यु के बाद घर-बार की चिंता किए बिना मंदा के खातिर दूसरे गाँव में आ बसी थी । अपने पोती को अपने साथ रखने के कुछ भी कर गुजरने को तैयार थी बऊ । शायद उन बूढ़ी आँखों में तब भी आखिरी उम्मीद थी कि महेंद्र की बेटी उसके अधूरे स्वप्न को पूरा करेगी । अपने बेटे के हत्यारों को सजा दिलाने के बारें में वह नहीं सोच सकती थी, क्योंकि वे बहुत शक्तिशाली और क्रूर थे ; किन्तु अपने बेटे के निशानी मंदा को अपने पास रखने के लिए बऊ ने हर सफल प्रयास किया था ।

स्वाभिमानी:

बऊ अत्यंत स्वाभिमानी स्त्री रही है, चाहे अपने पुरुखों की जमीन के मामले हो या चाहे मंदा के मामले में...दोनों के क्षेत्र में बऊ ने किसी के सामने भीख नहीं माँगी ! जिया तो अपने दम पर...श्यामली में भी परायों के घर रही जरूर परंतु अपनी खेत के हर साल के अनाज से इसकी

भरपाई भी की है । यथा- जब वे श्यामली छोड़ सोनपुरा जा रहे थे; मंदा एक क्षण के लिए डर गयी थी कि यहाँ के लोग कहीं रोकेंगे तो नहीं !! परंतु समाधान बऊ के पास मौजूद था-

"कका जू रोकेंगे तो नहीं ? उसका स्वर टूटा-सा था ।

अरे जान लेंगे क्या कका जू ? कह देंगे, अबकी नहीं अगले साल की भी फसल लै लो । अपने पइसा की भरपाई कर लो तुम ।"[13]

जब सोनपुरा में दोनों दादी-पोती वापस आयी...तब तक उनके खेत बेईमानी से बेचे जा चुके थे । घर में अनाज का एक दाना भी न बचा था । उस अवस्था में भी बऊ को किसी के आगे झुकना मंजूर था । सुगना के माँ की उपस्थिति के कारण बऊ बड़ी दुविधा में पड़ जाती है, मंदा से वह चुपके बात करती है कि ताकि घर की इस दीन परिस्थिति के बारें किसी को कुछ पता न चले; किसी के भी नजरों में अपने लिए बऊ दया की दृष्टि नहीं देखना चाहती थी ।

प्रेमा : 'प्रेमा' मन्दाकिनी की माँ के रूप में पाठकों के सामने आती हैं । पति महेंद्रसिंह के मृत्यु के बाद विधवा का जीवन नहीं जीकर पुनः विवाह किया था, जिसे उसकी सास तथा समाज ने अपराध का नाम दे दिया!! प्रेमा निसंदेह साहसी एवं स्वाभिमानी स्त्री रही है, इसीलिए उसने घुट-घुट कर अपने जिंदेगी का सौदा नहीं किया, अपने जीवन को दूसरा मौका प्रदान किया; किन्तु क़िस्मत से उसका साथ न दिया । उसका दूसरा पति दगावाज़ निकला ।

साहसी व्यक्तित्व :

अक्सर भारतीय समाज में यह देखा जाता है कि पति के मृत्यु के बाद पत्नी की जिंदेगी को भी समाज लगभग ख़तम ही कर देते हैं । अनमेल विवाह के कारण पुराने समय में पत्नी बहुत कम उम्र में ही विधवा बन जाती है, जब उसे विवाह का अर्थ ही मालूम नहीं होता है; तब वह विधवा धर्म को निभाने के लिए मजबूर हो जाती है । अपने पूरी जिंदेगी उसे मुरदों की भाँति गुजारनी पड़ती है । उसके इच्छा-आकांशाओं के बारें में कोई नहीं सोचते हैं... वाकई यह

विचारणीय है कि अगर एक मनुष्य जीवित रहता है तो फिर उसके अंदर निहित विषय-वासनाएँ कैसे मिट जाएगी ? प्रेमा ने जीने का प्रयास किया और बदनाम हो गई; भाग्य ने कुछ ऐसा खेल खेला कि बेटी भी उसकी नहीं हो पायी और दूसरा पति भी दगावाज़ निकला । वह ऐसा दलाल निकला जो विधवाओं की जमीन हरपने के लिए उनसे प्रेम का ढोंग करता; इस हक़ीक़त से रूबरू होने के बाद प्रेमा ने बेटी के जिम्मे का केस उठा लिया था । उसके स्वाभिमान को बहुत बड़ा धक्का लगा और तब से मानो जीवन और रिस्तों से उसका विश्वास उठ गया । मैत्रेयी पुष्पा ने यहाँ गाँव की लड़की व बहु प्रेमा के साहस को दिखाया है, जिसने अपनी जीवन को लोगों की हमदर्दी से ऊचाँ मानकर आगे बढ़ने का प्रयास किया । साथ ही अपने जीवन को अपने तरीके से जीना का प्रयास किया था ।

ममतामयी:

प्रेमा ने यद्यपि दूसरा विवाह किया, फिर भी मंदा के प्रति उसका प्रेम कभी कम नहीं हुआ था । अपने बेटी को अपने पास लाने के लिए उसने मुक़द्दमा भी चलाया था, परंतु जब उसे यह ज्ञात हुआ कि उसका पति उसके साथ साथ उसकी बेटी की संपत्ति के पीछे पड़ा है तब उसने केस वापस ले दिया । मंदा की हर मुस्किल घड़ी में उसकी माँ ने उसका साथ निभाया । कभी घर पैसा भेज देती तो कभी किसी के हाथों मंदा की खबर करती...बऊ ने प्रेमा के द्वारा भेजे गए पैसों को स्वीकार नहीं किया तो मंदा से चुपके चुपके मिलकर उसे पैसा दे देती । अपनी बेटी के सामने क्षमा माँगती और अपनी ओर से उसे यथासंभव मदद करती । मंदा के साहसिक प्रयासों को सराहती और उसकी जीत के लिए ईश्वर से दुआ माँगती ।

पश्चाताप की भावना:

यद्यपि प्रेमा ने दूसरा विवाह किया था, परंतु वह सुखी नहीं हो पायी थी । उसे इस बात का गम रह गया कि जीवन-साथी के सही चुनाव में वह धोखा खा गयी । अपने इस गलती को उसे जीवन-भर झेलना पड़ा था । जब भी कभी मंदा से उसकी भेंट होती; तो प्रेमा अपने आप को

दोषी पाती । मंदा के प्रति रहा उसका दायित्व उसे कोंसती और वह आत्मग्लानि में डूबती चली जाती है ।

सुगना: सुगना मन्दाकिनी के गाँव की लड़की है । जो उसका और बऊ का ख्याल रखती, ज्यादा पढ़ी-लिखी तो न थी वह पर समझदार है । गाँव के प्रति मंदा का निःस्वार्थ त्याग देख उसके संग संग रहती और उसकी सहायता करती ।

सुशील और समझदार:

गाँव की सभी लड़कियों की भाँति सुगना भी सहज-सरल है किन्तु उसकी एक और ख़ास बात है कि वह सुशील और समझदार भी हैं । मंदा को इसीलिए वह बहुत अच्छी लगती है । वह होशियार है और अपने परिवार को अभिलाख जैसे गलत लोगों से बचाना भी चाहती है । उसके बाप को शराब की लत है, उसका गलत फ़ायदा उठाकर अभिलाख उसके घर घुसता था । माँ-बाप दोनों को सुगना समझाती कि मन्दाकिनी का साथ निभाने से गाँव व समाज की भलाई संभव है । साथ ही साथ वह विनयी और शांत स्वभाव की थी। अपनो से बड़ों को सम्मान करती और उनका आदर करना जानती थी । कभी भी झगड़ा न करती और न ही किसी से ऊँची आवाज़ में बात करती...

निर्भीक एवं साहसी:

यद्यपि सुगना कोमल स्वभाव की थी परंतु उसमें साहस का अभाव न था । सच्चाई के लिए आवाज़ उठाने के मामले में वह कभी न मुकरती । गाँव का बदमाश एवं अत्याचारी व्यक्ति था अभिलाख; जिसने मंदा के पिता को भी मरवाया था । उसी अभिलाख ने अपने बेटे के साथ सुगना का विवाह कराने का जिद किया । सुगना राजी न थी क्योंकि उसके मन में भृगुदेव के लिए कोमल भाव थे । किन्तु उसके माता-पिता की रक्षा के लिए उसने शादी के लिए हाँ कह दिया । लेकिन कामुक और नीच अभिलाख ने सुगना को अपने हवस का शिकार बनाया ।

सुगना इस अपमान को सह नहीं पायी और उसने इसका बदला लिया अभिलाख से । ऐसा सबक दिया जिसने गाँव की दूसरी लड़कियों की जिंदेगी बच गयी । उसने अभिलाख की जान ले ली किन्तु ख़ुद को भी जला डाला । अपने गर्भ में रह गए अभिलाख के अंश को वह सह नहीं पायी और इस अपमान की ज्वाला में तिल-तिल कर मरना उसे स्वीकार न था । सुगना की माँ मंदा के आगे अपना क्षोभ उजागर करती है,

" बिटिया ! मंदा...जे हरामी अभिलाख हमारी सुगना को अपने पूत के लानें ब्याह रहा था...कि कसाई अपने लाने...

" नरकिया ने कुंआरी मोड़ी के संग...

" बिन्नू, गरभ रह गया ! छतपटाती फिरी मोरी सुगना...

" पर बहादुरी कढ़ी मोरी बिटिया । राच्छत के पिरान काढ़ दिए !..."[14]

iv. चाक:

चाक उपन्यास में सारंग और रेशम का किरदार ही सबसे ज्यादा प्रभावशाली रहा है । लौंगसिरी बीबी का चरित्र भी महत्वपूर्ण है, किन्तु बाकी दोनों की अपेक्षा इसका महत्व कम है । रेशम ने अन्याय के आगे सिर झुकाने से इंकार कर दिया और परिणामस्वरूप उसे मार दिया गया । सारंग ने भी हिम्मत दिखाई और जमकर अन्याय का प्रतिवाद किया, फलस्वरूप उसे गाँववालों ने बदनामी का चादर उढ़ा दिया । लेकिन सारंग ने हिम्मत नहीं हारी और अंत तक संघर्ष करती रही । लौंगसिरी बीबी ने सारंग का साथ दिया, जिसने विवाहित होने के बाद भी अकेले दिन बिताए थे; जिसके पति ने दूसरी औरत से ब्याह कर लिया था ।

सारंग: चाक उपन्यास की नायिका सारंग नैनी है जो शिक्षा का मोल जानती है और उसका प्रकाश वह अपने गाँव में फैलाना चाहती है । सारंग का पति पढ़ा-लिखा होकर भी इन बातों का महत्व नहीं समझ सका । मास्टर श्रीधर का प्रयास सारंग जैसा था, सो दोनों का एक

दूसरे के प्रति आकर्षण स्वाभाविक था । इस बात को सारंग के पति तथा समाज ने स्वीकार न किया और फलस्वरूप दोनों बदनाम हो गए । किन्तु सारंग ने हिम्मत दिखायी और अपने लक्ष में अड़ी रही ।

दृढ़ एवं साहसी व्यक्तित्व:

अपने लक्ष तक पहुँचने के लिए किसी भी व्यक्ति के भीतर इन दोनों गुणों का होना अत्यंत आवश्यक प्रतीत होता है । सारंग में भी यह गुण विद्यमान थे । अपने सीमित विद्या के सहारे वह अपने तथा गाँव के बच्चों को शिक्षित करना चाहती थी । इस क्षेत्र में केवल श्रीधर ने ही उसका साथ दिया था । हाँ, सारंग के ससुर उसे समझते थे, उसकी मन की बात को पढ़ने का प्रयास करते थे । उन्होंने ही सारंग को यह गूढ़ मंत्र सिखाया था कि सोने की तरह चमकने के लिए सोने की तरह तपना भी पड़ता है । घर-बिरादरी और बेटे के रोष के भय से वे बहू को प्रतक्ष रूप से सहयोग नहीं सकते थे । सारंग की दृढ़ता और धैर्य को देख एक समय के सैनिक ससुर जी का जी भर आता है । अपने पुत्र से सौ गुना काबिल बहू पाकर मानो वे धन्य हो गए थे, परंतु समाज के भय से बहू को सहारा और विश्वास नहीं दिला सके । इन बातों ने सारंग को और अधिक साहसी और दृढ़ बना दिया था । चन्दन को जब रंजीत ने शहर भेजने का निर्णय किया था, तब तो वह कुछ नहीं कर पायी परंतु अपने हिम्मत और ममता से उसे घर लौटाने में वह सफल हो गई थी । दूसरी बार जब पति ने फिर से माँ और बेटे को अलग करने की सोची तो सारंग ने माँ काली का रूप धारण कर लिया था । ससुर और पति उसके साहस को देख दंग रह गए, यथा,

“ पिटकर दोगुनी ताकत का अनुभव हुआ सारंग को, बुरी तरह लपक पड़ी हाथ-पाँवों में, पागल, विक्षिप्त की भाँति दौड़कर खूँटी से बंदूक उतारी और बिजली की सी फुर्ती से चला दी दोनाली- धाँय! धाँय! यह भी न सोचा कि निशाना किधर...

घर-आँगन थर्रा गया । चौक में पेड़ हिल गया । चिरइया-परेवा फड़फड़ा उठे ।

‘असल मर्द है तो छू चंदन को ! छू ?’ रणचंडी बनी खड़ी है सारंग ।” [15]

आत्मविश्वासी तथा स्वाभिमानी:

आत्मविश्वास मनुष्य को लक्ष की सीढ़ी चढ़ने में मदद करता है । रेशम की मौत और चंदन के दूर जाने से सारंग का आत्मविश्वास घटने लगा था, उसे किसी के सहारे की जरूरत थी...जो उसके मन को समझ सके । उसका खोया हुआ आत्मविश्वास श्रीधर वापस लाता है और इसी के चलते वह अपने बच्चे को घर ला पाती है । उसके बाद जब चुनाव लड़ने की बात आती है, तब भी वह पहले तो डरती है; पर बाद में अपने मन पर विजय प्राप्त कर लेती है । उसे पता था कि बदलाव के लिए किसी न किसी को आगे आना ही पड़ेगा, तो वही ही सही । धीरे धीरे उसका आत्म-प्रत्यय बढ़ता गया । जब रंजीत ने उसे नाम वापस लेने के लिए कहा तो वह बिल्कुल राजी नहीं हुई । यथा,

“ मैं चाहकर भी पीछे नहीं लौट सकती । अपने प्रधानजी से छिपा पाओ तो यह बात बताती हूँ कि पन्नासिंह नाम वापिस लेंगे, भले फत्तेसिंह खुदकशी कर लें । तुम मुझसे बाहर नहीं,’ कहते-कहते सारंग के मन में आत्मविश्वास जैसी लहर दौड़ने लगी ।” [16]

सारंग का व्यक्तिगत मत यह था कि एक पत्नी होने से पहले वह एक स्त्री भी है । परंतु तथाकथित सभ्य(!) समाज उसकी इस सोच का समर्थन नहीं करता है । अतः सारंग के स्वाभिमान को बार-बार ठेस पहुँचती है । जब रंजीत अपने पति होने का अधिकार जताता है, तब उसका स्वाभिमान और ज्यादा बढ़ जाता हैं । रंजीत एलान करता है कि वह ही घर का कर्ता-धर्ता है, जो दो लोगों के मेहनत से बनाया उसका मालिक केवल एक मर्द हो सकता है, औरत नहीं...

“वे चिंघाड़े, ‘नहीं आएगा वह । कतई नहीं आएगा । इस घर का मालिक मैं हूँ । यहाँ वही होगा, जो मैं चाहूँगा । मैं इस घर का कर्ताधर्ता ।’

वह सन्न सी देखती रह गई । जिस घर की रानी बनी डोलती है, एक पल में ही अपनी औकात पता चल गई ? रंजीत के मनमाफिक चलो, रानी बनी रहोगे..." [17]

मानसिक अंतर्द्वंद:

सारंग शिक्षिता थी; जीवन के अनुभवों ने उसे और भी प्रौढ़ बना दिया था । शायद इसीलिए कभी कभी जीवन के सत्य को जानने के बाद भी एक स्त्री का मन अपनी अस्तित्व को खोजता फिरता है । किसी की पत्नी होना सराहनीय है लेकिन पत्नी का अपनी मर्जी से चलना असहनीय है!! अतरपुरा गाँव में सारंग बदनाम हो रही थी...किंतु उसे परवाह न था । फिरभी जब वह घर-परिवार के बारें में सोचती है, एक अजीब सी बैचेनी घर कर जाती है । जब वह अपने बेटे को घर वापस लाने के लिए रंजीत से लड़ रही, जब श्रीधर को दुष्ट लोगों से बचाना चाहती थी, जब उसके चरणों में स्वयं को समर्पित कर देती है...हर वह क्षण उसके मन में द्वंद उत्पन्न करती हैं । परंपरागत संस्कारों के चलते अपने मन को वह कोसती है । यथा-

"उच्छवासों के बीच सोच रही है सारंग-मुझे भी क्या हो गया? रंजीत भी क्यों पागल हो गए ? वह सुन रही थी कोई कह रही थी, शायद जगदीश को अम्मा...बहना ऐसा कौन सा आदमी होगा, जो अपनी औरत को पराए मर्द के संग...बताओ, चार दिन से घर-बार त्यागे डॉल रही है मीराबाई सी "क्या बताऊँ किसी को, कि क्या हुआ था ? मुझे ये लोग क्या समझ पाएँगी... मैं ही नहीं जान पा रही कि जो कुछ उनके साथ हुआ, वह उसकी भरपाई थी या मेरी अपनी अधूरी-पूरी इच्छा? दबी-घुटी लालसा या वर्जित फल को चखने-जाँचने की जिद? मेरा ही फ़ैसला था कहीं । आजाद होकर सोच रही थी अपने बारें में । मास्टर ने तो यह भी सोचा होगा कि सारंग ने बांध लिया अब मुझे । चंदन के कारण श्रीधर को बांधना चाहती रही हूँ मैं ? या अकेली ही चलकर ताकत इकट्ठा कर रही हूँ? देखना चाहती हूँ कि कहाँ कहाँ से गुजर जाऊँगी? मालूम नहीं श्रीधर के संग एक हो जाने का कौन सा कारण था ।" [18]

सारंग अत्यंत दुविधा में पड़ गई थी । अपनी अस्तित्व की पुकार सुनने के लिए उसे एक माता और पत्नी के घर से गुजरना पड़ रहा था । जिससे बार-बार वह उलझन में पड़ जाती हैं । वह चाहकर भी अपनी अंतरात्मा की पुकार को अनसुना नहीं कर पायी ।

भावुक एवं परोपकारी मनोभाव:

सारंग केवल अपने बारें में नहीं सोचती, बल्कि गाँव की लड़कियों को वह सक्षम बनाना चाहती थी । उन्हें उनका अधिकार दिलाना चाहती थी । अपनी बुआ की बहन रेशम की हत्या के बाद सारंग ने मानो कसम खा ली कि रेशम के हत्यारे को सजा दिलवाकर रहेगी । गाँव में ओरतों की नहीं चलती; इसीलिए अपने पति रंजीत के सहारे उसने अपने लक्ष को पूरा किया । रेशम के मृत्यु के बाद उसे यह बात खलने लगी कि काश स्त्री के हक़ में भी कोई बोलता, उनका समर्थन करता, रेशम को अगर सहारा मिल जाता तो शायद उसे इस बेरहमी से कोई मार नहीं सकता था । चुनाव लड़ने के पीछे सारंग का मूल उद्देश्य यही था कि अबकी बार किसी निर्दोष की हत्या न हो पाए; स्त्री होने के कारण उसे कीड़े-मकोड़े न समझा जाये, बल्कि उन्हें भी समाज समान सम्मान मिलें । यथा-

“ हँसी आ गई सारंग को । ‘रामराज्य लेकर हम क्या करेंगे ? सीता की कथा सुनी तो है । धरती में ही समा जाना है तो यह जद्दोजहद ? अपने चलते कोई अन्याय न हो ! जान देकर इतनी सी बात, छोटा सा संकल्प करके निभाने की इच्छा है, बस ।” [19]

प्रेमी तथा ममतामयी हृदय:

सारंग नदी की तरह भावुक थी...उसका हृदय मोम का था । परंतु यह जरूरत पड़ने पर ब्रज की भाँति कठोर भी बन जाती है । माँ की ममता ही कुछ इस प्रकार होती है कि वह अपने बच्चे को प्यार करती है, डाटती भी है, पीटती है, किन्तु जरूरत परने पर अपने बच्चे के लिए वह दूसरों के सामने ढाल बनकर खड़ी रहती है । जब पहली बार रंजीत ने चंदन को पढ़ने के लिए

शहर भेजा तो सारंग उसका विरोध न कर पायी । एक माँ के पंखों को जैसे किसी ने काट दिया और वह छटपटाने लगी...उसके दुख का आगाज़ रंजीत को न हो पाया । वह दिन-रात चुप-छुपकर रोती रहती थी, पर रंजीत को उसके दुख का लेखमात्र भी आभास न था, आखिर एक माँ अपने बेटे से कैसे अलग हो सकती है भला !! माँ के मन के दुख को बाप अथवा पति यहाँ नहीं समझ रहा था । सारंग को पता था कि चंदन शहर नहीं जाना चाहता है, रंजीत ने उसे ज़ोर-जबरदस्ती भेज दिया अपने भाई के पास । जो भी हो, अंत में श्रीधर के प्रोत्साहन से सारंग अपने बेटे को घर वापस लाने में सफल होती है ।

" कोठे में कलम-दवात लेकर बैठी है सारंग । कागज पर कलम चलाती जा रही है, जैसे माँ-बेटे की रिश्ते का शिलालेख लिख रही हो । आँसू, ममता, लाड़, दुलार और विश्वास के अक्षर काढ़ती चली गई-निर्भय और दुस्साहसी इनसान की तरह..."[20]

अपने इस प्रयास ने उसे और अधिक मजबूत बना दिया और इसीलिए जब दुबारा रंजीत ने चंदन को सारंग से दूर करने के बात की तो एक माँ अपने बच्चे के लिए काली का रूप धारण कर लेती है ।

रेशम: रेशम सारंग की बुआ की बेटी है । वह बहुत साहसी और हिम्मतवाली थी । उसका पति करमवीर फौज में था जो उससे बहुत प्रेम करता था । परंतु जहरीली शराब पीने के वजह से शादी के कुछ ही समय बाद उसकी मृत्यु हो जाती है । विधवा रेशम को उसका जेठ अपनाना चाहता था, परंतु उसने साफ मनाही कर दी, क्योंकि उसे पता था कि यह हमदर्दी सिर्फ और सिर्फ जायदाद के लिए थी । रेशम अपने तरीके से जीना चाहती थी; जो समाज और घरवालों को पसंद न था । फलस्वरूप उसे गर्भवती अवस्था में बेरहमी के साथ मार दिया जाता है और घरवालों ने मिलकर इस घटना को दुर्घटना का चोला पहना दिया ।

ईमानदार:

पति के मृत्यु के बाद जब रेशम गर्भवती होती है; वह इस बात को छिपाती नहीं बल्कि अपने साँस को बोल देती है । लोकलाज के भय से साँस की बोलती बंद हो जाती है । वह तरह तरह के उपाय सुझाती रहती है, कि जेठ का हाथ थाम लो नहीं तो गर्भ नष्ट कर दो आदि आदि । यहाँ तक कि उसने काढ़ा पिलाकर रेशम के पेट में पल रहे बच्चे को मारने का प्रयास भी किया था । अपने साँस की हरकतों को देख रेशम दुखी होती है । वह इसका प्रतिवाद करती है, अपने जीवन को जीने का दूसरा मौका खोजती है ।

"रेशम भोले भाव से बोली, 'अम्मा, तुम तो बिरथा ही दाँत किटकिटा रही हो । तुम्हारे पूत की चिता ठंडी हो जाने से क्या मेरी देह की आग बुझ जाती? जीतों-मरतों का भेद भी भूल गई तुम ? बेटा के संग मुझे भी मरी मान ली … आज तुम्हारा बेटा मेरी जगह होता तो पूछतीं कि तू किसके संग सोया था ? अब उसकी बाँह गह ले । मेरे मरे पीछे तेरहीं तक का भी सबर न करता और ले आता दूसरी । तुम तो खुश होतीं कि पूत की उजड़ी जिंदेगी बस गई । पर मेरा फतीजा करने पर तुली हो ।" [21]

साहसी:

अपने अंजाम को जानते हुए भी रेशम ने हिम्मत न हारी । लेकिन सारंग घबरा गयी थी । उसने रेशम को अपने घर रखना चाहा पर उसने मना कर दिया । क्योंकि रेशम जानती थी कि एकबार अगर वह अपने घर से चली गई तो दोबारा यँ लोग उसे यहाँ बसने न देंगे और इधर वृथा ही उसकी जीजा की बदनामी होगी । इससे तो अच्छा है कि वह डटकर इस परिस्थिति का सामना करें । हर दिन मर मर कर जीने से एक ही दिन में मर जाना रेशम को मंजूर था । वह सारंग से बोलती है,

" बीबी, वे लोग मुझे देबी बनाते हैं तो कभी राच्छसी । देबी तो पत्थर की होती हैं, मैंने कह दिया । उसका ठौर मंदिर में होता है और राच्छसी लोगों का सत्यानाश करती है । मैं दोनों की तरह की नहीं । हाड़-मांस की बनी लुगाई, जिसके पेट में बालक है..." [22] सारंग उसके साहस को देख दंग

रह जाती है, उसे डर लगने लगता है कि कही उसे कुछ हो न जाये। बहन की चिंता को देख रेशम हँसती है और एलान करती हैं कि,

"सारंग बीबी, तैयार करने दे सूली, मैं हौसला नहीं हारूंगी, हाँ ।"[23]

लौंगसिरी बीबी: उपन्यास का यह किरदार वाकई बहुत अलग है । एक औरत जिसने अपनी विधवा माँ को घूमने-फिरने न दिया; उनकी इच्छाओं को दबोचकर रखा था; उसका पति शादी के कुछ ही सालों के बाद दूसरा ब्याह कर लेता है और शहर में ही बस जाता है । एक बेटा था, वह शहर में जाकर वापस न आया । रह गई बीबी...बिल्कुल अकेली; सारंग और श्रीधर को पाकर वह मानो पुनः जी उठती है और उनकी सहायता करती है । अपने विधवा माँ पर किए अत्याचारों को याद करके वह रह-रह कर पश्चाताप करती है । उसके जीवन में जो घटित हुआ; उसे बीबी अपना कर्मफल मानती हैं ।

5.2. रीता चौधुरी के उपन्यासों के नारी पात्रों का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन:

रीता चौधुरी के उपन्यासों की नायिकाएँ अत्यंत साहसी और समझदार हैं । सभी उपन्यासों के पात्र संघर्षशील हैं और ईमानदार हैं । आत्मविश्वास उनकी प्रेरणा है और साहस उनका ढाल... इसी को साथ लेकर वह निरंतर लड़ती हैं और अंत में विजय प्राप्त करने में समर्थ होती हैं ।

I. देउलांखुई:

प्रस्तुत उपन्यास में तीन पीढ़ियों को दिखाया गया है । जहाँ तीन नारी पात्र मुख्य रूप से उभरकर आती हैं । क्रमशः चंद्रप्रभा उर्फ कनचारी, गंगावती और सुकोमला इन पात्रों के नाम हैं । चंद्रप्रभा की बहू गंगावती और गंगावती की बहू है सुकोमला...यँ तीन नारी ही इस उपन्यास की संचालिका हैं ।

चंद्रप्रभा: चंद्रप्रभा जितारि वंश की वधू एवं राजा प्रतापचंद्र की रानी हुआ करती थी, जो अपने पति द्वारा मिथ्या संदेह में देश से निर्वासित कर दी गई थी । इस घटना के बाद उसे यह अहसास हो गया था कि नारी का अपना अस्तित्व होना कितना महत्वपूर्ण हैं । तो इसके बाद शुरू हुआ है उसका संघर्ष । चंद्रप्रभा से कनचारी बनना आसान नहीं था, पर अपना पहचान बनना जरूरी था ।

दृढ़ और आत्मविश्वास की भावना:

चंद्रप्रभा एक आर्य राजकुमारी थी, जिसे हर तरह की शिक्षा व संस्कार प्राप्त थे । अपने संस्कारों ने उसे पुरुषों के अधीन रहना तो सीखा दिया परंतु उनके द्वारा किए गए अन्याय सहने की सीख वह नहीं ग्रहण कर पायी । राजा प्रतापचंद्र ने जब उसे अपने जीवन व देश से निकाल दिया था, तभी उसने यह निश्चय कर लिया था कि अब कभी उस साम्राज्य में लौटकर नहीं जाएगी । निर्वासन के समय 'गोभा' के राजा और प्रतापपुर के महामंत्री सगर ने पुनः उनसे यह अनुरोध किया कि वे प्रतिवाद करें, किन्तु रानी चंद्रप्रभा ने गोभा के निरपराधी प्रजा के प्राणों की रक्षा के लिए ऐसा करने से से मना कर दिया और उनको भी रोक लिया । उसके मन में यह भी बात थी कि जहाँ विश्वास है ही नहीं वैसे संबंध में रहकर वह क्या करेगी । अपने ऊपर चंद्रप्रभा का अटूट विश्वास था; इसीलिए राजा द्वारा धमकाये जाने के बाद भी उसने माफी नहीं माँगी, जो गुनाह उसने किया ही ही नहीं उसके लिए भला क्यों माफी माँगे ?

"आप प्रतिवाद कीजिये रानी जी- साधुकुमार ने अधीर होकर कहा था ।

साधुकुमार की ओर देखकर धीर स्वर से चंद्रप्रभा बोल उठी-

नहीं करूँगी गोभाराज । अपने न्याय के युद्ध में दूसरे राज्य की प्रजा का अन्याय मैं नहीं कर सकती हूँ । यदि आपके राज्य में मेरे लिए जगह नहीं है तो बाबा ब्रम्हपुत्र है-भय किस बात की?

गंभीर आत्मप्रत्यय से भरे कदमों से नाव में चढ़ गई थी चंद्रप्रभा । रानी के अटल सिद्धांत को सुनकर साधुकुमार और मंत्री सगर, शायद बाकी सब भी स्तब्ध हो गए थे ।"[24]

स्वाभिमानी एवं संवेदनशील:

रानी चंद्रप्रभा अत्यंत स्वाभिमानी थी, राजा द्वारा तिरस्कृत होने बाद उसे इतना ज्यादा दुख हुआ जिसे वह कभी भुला न पायी । इसीलिए कभी वापस प्रतापपुर नहीं गई , गोभा के राजा साधुकुमार के उपकारों को वह भूल न पाई और न ही अपने पति के द्वारा दिये गए लांछनाओं को...संवेदनशीलता उसमें अत्यधिक रही है, जिसके कारण वह जीवन के हर मोड़ पर भावुक हो उठती थी । लेकिन अब उसने निश्चय कर लिया था कि अपने अतीत को भुलाकर नयी जिंदेगी की शुरुवात करेंगी और अपनी एक पहचान बनाएँगी । अपने आप से वह वादा करती हैं,

"प्रतापपुर में क्या था चंद्रप्रभा का ?

क्या वहाँ उसके पैरों तले जमीन थी ?

क्या उसकी अपनी कोई पहचान थी वहाँ ?

कोई अधिकार ? मर्यादा?

नहीं था, कुछ भी तो नहीं था वहाँ । यदि होता तो प्रतापचंद्र चंद्रप्रभा को राज्य से नहीं निकाल पाते । अपने अधिकार, अस्तित्व और मर्यादा की शक्ति से वह प्रतापचंद्र को प्रत्याह्वान दे सकती थी ।

तब मिलता न्याय, सुविचार ।

नहीं, अब कभी उस देश में चंद्रप्रभा वापस नहीं जाएगी । वह यही रहेगी और इसी समाज के मिट्टी से अपने आप को नए रूप में ढाल कर नया जन्म लेगी चंद्रप्रभा ।"[25]

मानसिक अंतर्द्वंद:

चंद्रप्रभा से राजमाता कनचारी तक की यात्रा में उसे अनेक अंतर्द्वंद से गुजरना पड़ा था । पीड़ा थी अपने अतीत संस्कारों से नहीं उभर पाने की, खुशी थी अपने नए अधिकारों व इच्छाओं की प्राप्ति की...गोभा में आकर भी वह अपने अतीत से जुड़ी हुई थी, जिसकी पहचान उसके कपड़ों व गहनों से होती थी । अपने इन चीजों को वह सहेजकर रखती थी, दूसरे देश में आकर भी अपने पूर्व प्राप्त संस्कारों में बंधी थी चंद्रप्रभा । अपने पति के द्वारा किए गए अन्यायों के बाद भी आर्य नारी के संस्कार उसे विवश करती है उसके नाम का सिंदूर पहनने के लिए...वह अपने आप से सवाल करती है,

"क्या चंद्रप्रभा के मन के कोने में अभी भी इंतेजार है ? प्रतापचंद्र के बुलावे का ? क्या अभी भी वह अपने स्वामीगृह में लौट जाने के लिए उन्मुख हैं ? अंजाने में ही सही ?

नहीं, नहीं, नहीं ।

प्रतापपुर को सदा के लिए त्याग कर आयी है चंद्रप्रभा । अविवेचक स्वामी प्रतापचंद्र के प्रति बिंदुमात्र भी आकर्षण नहीं है अब उसमें ।

नहीं, फिरभी कुछ है । कुछ ऐसा, जिसे शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता, समझा नहीं जा सकता । अभी भी कुछ अनुभूति उसके मन में हैं..."[26]

चंद्रप्रभा के पेट में आर्य समाज का खून पल रहा था, इसीलिए वह बंधन अब भी उससे नहीं छूट रहा था । परंतु आरिमत्त के जन्म के बाद एक दिन सोनजिरा नामक लड़की की बातों ने पुनः एक बार उसे सोचने के मजबूर कर दिया । जिस समाज के पुरुष ने उसे समाज से बाहर निकाल दिया, वैसे लोगों के संस्कार व स्मृति को वहन करना कितना समीचीन होगा ? अब उसके मन में यह प्रश्न था कि वह किसे अपनाए ? उस समाज को जिसमें उसका अस्तित्व नहीं था, अधिकार नहीं था या फिर इस समाज को जिसने उसे आश्रय प्रदान किया, पहचान दिया और अधिकार भी दिये ! उत्तर स्पष्ट था, चंद्रप्रभा दुविधा से मुक्त होने लगी और उसने यही निश्चय

किया कि जिस समाज ने उसे अपनाया, उसके बच्चे को अपनाया; वह उसी समाज का हिस्सा बनेगी और वहाँ के लोगों के साथ घुल-मिलकर रहेगी । गोभा के राजा से वह कहती है,

"गोभराज, मैंने बहुत सोच-विचार किया और यही पाया कि –इस समाज से दूर जाने का कोई अर्थ नहीं । मेरा पुत्र आरिमत्त वैसे ही बड़ा हो, जैसे इस समाज के दूसरे बच्चे बड़े होते हैं । उसे एक नाम दीजिये । समाज द्वारा या आप द्वारा प्रदान किया गया एक नया परिचय दीजिये । राजपुत्र होकर तो मेरे पुत्र ने जन्म नहीं लिया है-दूसरे राज्य की आश्रिता क्षुद्र नारी के पुत्र के रूप में उसने जन्म लिया है । वह वैसे ही बड़ा हो । मैं भी अपना परिचय त्याग दूँगी । मैं भी इसी समाज का अंग बन जाऊँगी । नया नाम ग्रहण करूँगी।" [27]

प्रजाहितैषी:

चंद्रप्रभा धीरे धीरे तिवाशा समाज के हिस्से में परिवर्तित हो गई । गोभा के सर्वोच्च नारी के स्थान पर प्रजा ने उसे उसे बिठाया था, इसीलिए उसने भी स्वयं को गोभा के हित के लिए न्यौंछावर कर दिया । जब उसे इस सत्य का आभास होता है कि उसका पुत्र खला राज्य की रानी गंगावाती से प्रेम करता है और दोनों एक ही कुल के हैं; तो तुरंत उस रिस्ते को मना कर देती है । तिवाशा समाज में एक ही कुल में विवाह निषिद्ध है । और फिर आरिमत्त तो राजा था, राजा ही अगर नियम थोड़ दे तो प्रजा में शांति बनाए रखना असंभव हो जाएगा । इसीलिए जान बूझकर कनचारी ने यह सिद्धांत ग्रहण किया । उसके मन कहीं न कहीं यह बात भी थी कि जिस देश ने उसे और उसके बेटे को आश्रय प्रदान किया, उसी समाज के नियम को न मानना भारी लज्जा की बात होगी । गोभा राज्य के प्रति उसके मन अपार श्रद्धा थी और हर हाल में वह उन प्रजाओं का साथ देना चाहती थी, जिन्होंने रानी न होते हुए भी उसे रानी से ऊँचा दर्जा प्रदान किया था ।

निःस्वार्थ प्रेमी:

चंद्रप्रभा जब राजा प्रतापचंद्र की रानी बनी थी, तब वह बहुत कम उम्र की थी । जब उसने गोभा राज्य में प्रवेश किया तब उसे मालूम पड़ा कि उसके उम्र की लड़कियों को तो यहाँ शादी के लायक मानते ही नहीं । राजा उसे बहुत प्रेम करता था । उसकी रूप की प्रशंसा करता था, उसे अपने पलकों पर बैठाकर रखता था लेकिन एक सामान्य दुर्घटना को वह स्वीकार न सका । अपने प्रिय रानी के चरित्र पर बिना विचार किए सवाल उठाया और यही नहीं उसे देश से ही निकाल दिया । तब चंद्रप्रभा को यह सत्य ज्ञात हुआ कि वह तो प्रेम था ही नहीं, वह तो सिर्फ़ शारीरिक आकर्षण मात्र था । जब गोभराज साधुकुमार उसे अपने देश में बड़े प्यार और सम्मान से रखा, वह उसे शक के निगाहों से देखने लगी । उसने साधुकुमार को बहुत कड़वे शब्द सुनाये, क्योंकि तब तक चंद्रप्रभा ने केवल प्रतापचंद्र जैसे पुरुषों को ही देखा और जाना था । जो नारी को अपनी संपत्ति मानकर उसपर अपना अधिकार जताते हैं । किन्तु साधुकुमार के निःस्वार्थ प्रेम ने उसे हरा दिया था । वह यह सोचने के लिए विवश हो गयी थी कि प्रेम शरीर का नहीं दो आत्माओं का मिलन है । दोनों अलग अलग राजभवन में रहते थे लेकिन दोनों का मन एक साथ रहते । एक दूसरे के प्रति उनके मन में अपार श्रद्धा और प्रेम था परंतु दिखावे की जरूरत नहीं थी । कभी एक दूसरे से वे अपनी मन की बात नहीं कह सके । चंद्रप्रभा के लिए साधुकुमार ने कभी शादी नहीं की, उसके बेटे को ही अपना उत्तराधिकारी बनाया । इस त्याग के बाद चंद्रप्रभा कनचारी में परिवर्तित हो गई थी और साधुकुमार के हर सुख-दुख में उसका साथ निभाया था ।

गंगावती: 'खला' राज्य की रानी गंगावाती चंद्रप्रभा के पुत्र एवं गोभा के राजा आरिमत्त से प्रेम करती थी । वह एक अच्छी नारी होने के साथ साथ प्रजा हितैषी शासक भी थी । परंतु वे विवाह नहीं कर पाये, क्योंकि दोनों एक ही कुल के थे । रानी गंगावाती के सामने जब चयन का सवाल आया तब उसने अपने प्रेम का त्याग कर राज्य को चुना । एक राजा का सर्व-प्रथम धर्म होता है अपनी प्रजा की रक्षा करना, हर सुख-दुख में उनका साथ निभाना और रानी गंगावती ने इस धर्म को भली-भाँति निभाया ।

साहसी एवं स्थिर व्यक्तित्व:

रानी गंगावती का व्यक्तित्व स्थिर एवं साहसी था । रानी होने के नाते उसे संयम तो रखना ही था परंतु बिन माँ के पलने के कारण वह अपेक्षा के अधिक धीर एवं शांत थी । कभी किसी बात के लिए जिद नहीं करती । अपने पिता के स्वभाव से मेल खाने वाली रानी गंगावाती को जब आरिमत्त और उसके कुल का पता चला, उसने सबसे पहले आरिमत्त से मिलकर बात की । एक क्षण के लिए उसने राज्य को त्याग कर प्रेम को चुनने के बारें में विचार किया; किन्तु जब स्थिर मन से उसने विचार किया तो अपना राज्य वह नहीं छोड़ पायी । अपने प्रेम के बिना जी पाना अत्यंत कठिन होता है, इस सत्य को जानते हुए भी उसने यह निर्णय लेने का साहस किया । उसे पता था कि समाज में उसे इस बात का उत्तर देने होगा, वह डगमगायी नहीं, वरन उसने स्वयं पुरोहित से मिलकर सारें नियमों का पालन करते हुए राज्य को पुनः संभाला ।

प्रचुर मानसिक अंतर्द्वंद:

गंगावती को अपने जीवन में अनेक मानसिक अंतर्द्वंद से गुजरना पड़ा था । अपने प्रेम व कर्तव्य में किसी एक का चयन कर पाना; निःसंदेह बहुत ही कठिन व कष्टदायक रहा होगा । फिरभी उसने अपने दिल पर पत्थर रखते हुए रानी का कर्तव्य निभाया । फिर जब उसे यह ज्ञात हुआ कि आरिमत्त ने विवाह कर लिया है तब उसने अपने पेट में पल रहे बच्चे के बारें में उसे जानने न दिया । वह चंद्रप्रभा से कहती है,

“समाज के बीच रहने का निर्णय कर लिया है तो उनका निषेध भी मानना पड़ेगा माँ । आप चिंतित न हो । मन को कष्ट न दे । मैं ‘खला’ में ही रहूँगी । मृगांक(आरिमत्त का दूसरा नाम) के साथ इस विषय में कोई संपर्क न कीजिएगा माँ ।” [28]

निःस्वार्थ प्रेम और महान त्याग:

रानी गंगावती ने हर क्षण अपने राज्य का भला चाहा और साथ ही उसकी उन्नति; अपने प्रजा और राज्य के लिए वह सबकुछ कर सकती थी । आरिमत्त के प्रति उसके मन में गंभीर प्रेम था, जो शारीरिक प्रेम से ऊपर था । इसीलिए जब चंद्रप्रभा ने आरिमत्त और उनके जीवन की पूरी बात सुनायी तब उसने यह निर्णय लिया कि जिस व्यक्ति से वह प्रेम करती है, उसे स्वार्थी का खिताप वह नहीं पहना सकती । आरिमत्त का आन-वान और शान तथा प्रजा के मन में उसके प्रति रहे विश्वास को वह ठेंस नहीं पहुँचा सकती है । किन्तु जब उसे इस सत्य का आभास हुआ कि उन दोनों का प्रेम उसके पेट में पल रहा हैं तो वह आरिमत्त को यह बात बताना चाहती थी । लेकिन आरिमत्त के विवाह के संवाद ने उसे रोक दिया और उसने निर्णय कर लिया कि अब वह उसके जीवन में वापस नहीं जाएगी । अपनी पूरी जिंदेगी उसके प्यार के यादों के सहारे ही काट ली । गंगावती चंद्रप्रभा से कहती है,

"क्यों इतनी जल्दी मृगांक विवाह के बंधन में बंध गया –मैं जानती हूँ । आप भी शायद समझ रही है । मेरे ऊपर रहे अभिमान के चलते ही उन्होंने विवाह कर लिया- किन्तु कहीं तो जाकर रुके हैं, अपने आप को ध्वंस नहीं कर दिया । वे वहाँ ही रहे-वहीं शांति से रहे वें । मैं पुनः उनकी जिंदेगी में वापस जाकर बातों को बिखेर देना नहीं चाहती हूँ ।" [29]

सफल राजनीतिविद:

निःस्वार्थ प्रेमिका होने के साथ साथ गंगवाती एक सफल राजनीतिक भी थी, जिसने खला राज्य का अंत्यन्त सुंदर रूप से संचालन किया था । जब पहली बार आरिमत्त उससे मिला था तो उसकी राजनीतिक बुद्धिमत्ता को देख दंग रह गया था । अपनी प्रजा और दूसरे राजाओं का कितना खयाल रहता हैं उसे...वह आस-पास के राजाओं के साथ मित्र-भाव से रहना पसंद करती है और अपनी प्रजा की शांति में ही अपना सुख ढूंढ लेती हैं । इस पात्र के माध्यम से कथाकार ने नारी के एक ऐसे रूप को पुनः उजागर किया जो संसार के कर्ता-धर्ता के रूप में प्रचलित हैं । रानी लक्ष्मीबाई, शहीद कनकलता आदि ऐतिहासिक पात्र इतिहास और समाज के

लिए गौरव का विषय है । रानी गंगावती भी इन्हीं में से एक हैं । जो देश के लिए मर-मिटने का जज़्बा रखती हैं । एक माँ, पत्नी, बहन और स्त्री होने के साथ साथ वह उद्धारकर्ता भी है । मनुष्य को मनुष्य कहलाने के लिए जिन गुणों की आवश्यकता होती हैं वह जब एक स्त्री में भी होती है, पर न-जाने क्यों फिर भी उसे सही सम्मान व स्थान प्राप्त नहीं होता है ।

सुकोमला: सुकोमला जकांक की पत्नी थी, जकांक आरिमत्त और गंगावती का बेटा था । 'डिवांग' राज्य के राजकुमारी सुकोमला सहज-सरल लड़की थी । उसके पिता ने अपने उच्चाकांक्षाओं के लिए उसकी बलि चढ़ा दी । सुकोमला को जकांक से साथ विवाह में बंधने के लिए मजबूर कर दिया । राजनैतिक स्वार्थ के आगे पितृत्व का दायित्व भूल गए राजा ।

स्वदेश प्रेम:

सुकोमला ने राजा जकांक से विवाह इसलिए किया था ताकि अपने देश को संभाव्य विपदा से बचा सके । दूसरी ओर राजा जकांक ने यह रिस्ता इसलिए स्वीकार किया ताकि दोनों देशों के बीच मैत्री का भाव बना रहे; परंतु राज्य में रहे कुछ गलत लोगों की कु-मंत्रणा में आकर दिवांग के राजा ने यह समझ लिया था कि गोभा तथा खला नरेश जंकाक उसे भी अपने अनुगत करना चाहते है । इसीलिए उसने गुप्तचर के रूप में अपनी बेटी को भेज दिया गोभा के राजमहल में । सुकोमला के मन यह बात भर दी गई कि तू देश के लिए जा रही है और अपने इस उद्देश्य को कभी मत भूलना अब तुझ पर ही तो देश की सुरक्षा निर्भर है । वह बिचारी क्या करती ! पिता तथा देशप्रेम के लिए यह बलिदान चढ़ाने के तैयार हो गई और गोभा महल से पल पल की खबर स्वदेश तक पहुँचाती रही । विवाह के दिन धरती पर माथा टेककर वह शपथ लेती है,

"इस भूमि में मैं सिर रख रही हूँ- यह भूमि मेरी नहीं है, यह मेरे स्वराज डिवांग के शत्रु की भूमि है । मैं अपने डिवांग के भूमि के लिए अपना जीवन उत्सर्गित करूँगी... मैं डिवांग के भूमि के प्राणों की आहुति दूँगी..."[30]

सही मायनों में जकांक को कभी उसने अपना पति नहीं माना । हाँ! जकांक उसे बहुत प्रेम करता था, उसका खयाल रखता , वह उसके बच्चे की माँ बननेवाली थी, किन्तु फिर भी अपने राज्य के लिए ली गई शपथ ने उसे जकांक के साथ विश्वासघाट करने पर मजबूर कर दिया । दो राजनीतिक पुरुषों के षड़यंत्र ने पुनः एक नारी को कलंकृत कर दिया । मित्रता के आड़ में दुश्मनी निभानेवालों ने एक स्त्री के कोमल हृदय का लाभ उठाकर उसे गलत राह में परिचालित कर दिया । मिथ्या बना दिया पति-पत्नी के पवित्र बंधन को...सुकोमला को दायित्व दिया गया था कि वह जकांक का मंत्रपूत तलवार को अपने देश भेज दे, जिससे उसकी स्वदेश की रक्षा हो सके । लेकिन उसे यह नहीं पता था कि उसके पिता खला राज्य का आक्रमण की अभिप्राय से यह सब कर रहे है ! उसने सोचा था कि तलवार अपने पिता को देकर वह अपना दायित्व पूरा कर देंगी और अपने पति और बच्चे के साथ एक नयी खुशहाल जिंदेगी की शुरुवात करेगी ।

“यही शेष है...किसी तरह एक बार तलवार पिता तक पहुँचा दे, बस उसके बाद वह और ऐसा काम नहीं करेंगी, अपने कर्तव्य के समापन के बाद वह जोड्गाल बलहू (जकांक का दूसरा नाम) की पत्नी बनकर, खला राज्य की रानी के रूप में इस राज्य में रहेंगी ।” [31]

परंतु उसके भावना मन में ही रह गई और डिवांग के राजा ने खला पर आक्रमण कर दिया । अपने पिता के अन्याय को जबतक वह समझ पाती तब तक बहुत देर हो चुकी थी । अपने प्रिय नारी द्वारा विश्वासघाट किए जाने पर जकांक मानसिक संतुलन खो बैठता है और पत्नी हत्या का भागीदार बन जाता है । इधर डिवांग राजा के सैनिक अत्यंत करुण रूप में जकांक की हत्या कर देते है ।

मानसिक अंतर्द्वंद:

रानी सुकोमला के मन में अत्यधिक अंतर्द्वंद रहा हैं । वह हमेशा इस बात को लेकर चिंता में रहती थी कि वह किसे चुने ? आखिर कौन सही है और कौन गलत! यह सोचकर वह विचलित हो उठती थी । एक राजकुमारी- जिसने देश के लिए काम करने का प्रण लेकर विवाह

किया है, उसका मन विवाह के बाद परिवर्तित सा होने लगता है । पति द्वारा प्राप्त प्रेम ने उसे सोचने पर मजबूर कर दिया कि क्या वह सही कर रही है ?

"सुकोमला इस राज्य की रानी है । जोड्गाल बलहू (जकांक का दूसरा नाम) की पत्नी । जोड्गाल के संतान की माँ बनने वाली है सुकोमला ।

कौन श्रेष्ठ है ? स्वामी या स्वदेश ? आंतरिकता या एक राज्य के लोगों का भविष्य ?

वैसे सोचने से तो सुकोमला को स्वदेश ही श्रेष्ठ लगता है । अपने आप को स्वदेश के लिए बलिदान देने वाले सैनिक सा लगता है । किन्तु जोड्गाल द्वारा प्राप्त प्रेम उसे कोमल बना देती है, वह सोच में पड़ जाती है । [32]

II. पपीया तरार साधू:

प्रस्तुत उपन्यास में पत्रकारिता-जगत के भीतरी अंश को प्रतिफलित किया गया है । सही और गलत दोनों दिशाओं पर आलोकपात किया गया हैं । जेउति और अपर्णा नामक पात्र के सहारे कथाकार ने दोनों प्रकार की स्थिति को दिखाने का प्रयास किया है ।

जेउति: एक छोटी सी गाँव की लड़की है जेउति । मन में सच्चे साहित्यकार और पत्रकार बनने का अनेक स्वप्न । परंतु अपने आत्मविश्वास के दम पर नहीं, लोगों की प्रशंसा के भरोसे जीती थी वह...इसीलिए शायद सही और गलत का फर्क नहीं कर पायी और मिथ्या यश के दल-दल में फँस गई । उसे यश का लोभ था और इसी लोभ के कारण उसका नैतिक पतन हुआ ।

प्रतिभाशाली एवं अत्यंत उच्चाकांक्षी:

जेउति के अंदर निसंदेह प्रतिभा थी और वह जीवन में बहुत...बहुत आगे बढ़ना चाहती थी । इसकारण ही तो जैसे भी हो आगे बढ़ने का रास्ता खोजती फिरती । यश के मिथ्या मोह ने उसे ग्रस लिया था, जिसके कारण उसे उपदेश देने वालों से प्रशंसा करने वाले ज्यादा भाने लगे थे

। जिन लोगों को प्रशंसा प्रिय होती हैं, उन्हें वश में करना अपेक्षाकृत आसान होता हैं । जेउति ने जिन लोगों को बड़ा साहित्यकार एवं पत्रकार मान बैठी थी, वें सब वास्तव में मुखौटे के आर में जीते थे, किन्तु उन्हें पहचान पाना आसान न था । जो सच्चे और ईमानदार व्यक्ति व जेउति के अपने थे, उनसब ने मिलकर जेउति को सावधान किया तथा इस मुखौटों को उतारने का प्रयास किया था । किन्तु चमक की चकाचौंध रोशनी में जेउति सादगी व ईमानदारी को पहचान न पायी । उसका आत्मविश्वास भी डगमगाया हुआ था, इसीलिए तो उसे ऐसा प्रतीत होता था कि बिना किसी शक्तिशाली व्यक्ति के अच्छा साहित्यकार, कवि अथवा पत्रकार बनना संभव नहीं हैं । इस कारण तो थोड़ा कॉम्प्रोमाइज़ करना ही पड़ेगा । कथाकार लिखती है,

"प्रशंसा। एक ऐसा शब्द ।

जो पल में ही तेजस्वी बना सकते है मनुष्य को, उज्ज्वल बना सकता है ।

साहसी, आत्मविश्वासी सुखी और जोशिला बना सकता है । जेउति को भी प्रशंसा ने ऐसा बना दिया हैं । उसके हाव-भाव, बात करके के तौर-तरीकों में प्रतिफलित होती है सफल मनुष्य की दुविधामुक्त उज्जलता ।" [33]

अपने इस मिथ्या यश के आगे सारा संसार उसे झूठा और निर्दय प्रतीत हो रहा था । जो उसे इस पथ पर आगे बढ़ने के लिए रोकती, वह इंसान उसके लिए शत्रु बन चुका था । अनजाने में ही सही जेउति के मन में अहंकार का प्रवेश हो चुका था जो उसे और अंधा बनाने में ईंधन का काम कर रहा था । अपनी बहन रूपाली की बातें उसे चुभने लगी थी,

"मैंने जीवन में जो पाया है, क्या रूपाली दीदी को वह सब प्राप्त हुआ है ? सुबिमल जी जैसे मनुष्य के हृदय को जीत पाने की योग्यता क्या उनमें हैं ? क्या वह मेरी जैसी लिख पाएगी ? कहानी, कविता या फिर आलेख ? उतनी गहरी सोच होती; तो बात ही कुछ और होती..."[34]

मानसिक अंतर्द्वंद:

एक बार जिसने यश का आनंद प्राप्त कर लिया हो, वह बिना यश के जी नहीं सकते । जेउति ने आकर जिस जगत में कदम रखा था; वहाँ पहले तो यश ही यश हैं किन्तु बाद में केवल निराशा निराशा हैं । क्योंकि वें सब यश के नाम पर केवल धोखा होता है । धीरे धीरे उसके सपनों का महल टूटने लगा था और अंधियारी जगत का सच उसके सामने आने लगा था । अपने यश व सम्मान को खोकर वह निराश हो रही थी । कहते है कि डूबने वाले के लिए तिनका ही सहारा बन जाता है । जेउति ने अब हर तरह के प्रस्ताव को स्वीकार कर अपना नाम जिंदा रखना चाहा । शायद इसीलिए कवि सम्मेलन में जाने के लिए किसी बड़े कवि द्वारा दिये गए अश्लील प्रस्ताव को भी स्वीकार कर गई । अपने किए पर वह शर्मिंदा थी और ग्लानि ने उसका हृदय जला दिया था । वह अपने आप से पूछती;

"ये क्या हो गया है मुझे ? मुझमें प्रतिवाद करने की शक्ति क्यों नहीं रही?" [35] यह जेउति की अंतरात्मा थी, जो उसे कोस रही थी । उसके मन में सवालों का बवंडर था, लेकिन जबाब नहीं था । अपना ईमान खोकर वह लज्जित थी,

"अब क्या करेगी वह ? कैसे अपने आप को इस नैतिक पतन की राह से निकालेगी ?

कैसे अपने पैरों तले जमीन को बांधे रखेगी ? क्या है वह सहारा ? कहाँ है वह पथ ?" [36]

गुरुप्रेम:

कथाकार ने जेउति के समग्र व्यक्तित्व को उजागर किया हैं, जहाँ उसकी खामियाँ नजर आ रही थी, वही उसके गुण भी...जेउति के साथ जो अंतिम निर्दय घटना संघटित हुई; उसकी चशमदित गवाह वह खुद थी । परंतु उसने दोषी के खिलाफ गवाही नहीं दी । इसी बात के प्रति कथाकार ने पाठकों का ध्यान आकर्षण किया है । जो लड़की अंत में अपने आप को पहचान पाती है, अपनी गलतियों को पहचान पाती हैं; भला उसने ऐसा क्यों किया ? जब उसे सच का साथ देने का मौका नहीं मिला तो उसने उसका सदुपयोग क्यों नहीं किया ? जेउति ने यह त्याग

अपने आदर्श व अपने गुरु अपर्णा के लिए किया था । भले ही अपर्णा इस बात से अंजान थी कि उसके पति ने 'गुरु दक्षिणा' के नाम पर जेउति से मौनता मांगा था । जेउति ने सोचा कि जीवन में उसने इतनी गलतियाँ की हैं, अगर उसके चुप रहने से उसके परम आदर्श गुरु की बेटे का प्राण बच जाएगा, तो इतना त्याग तो वह अवश्य ही कर सकती है । किसी अच्छे काम के लिए अपने जीवन को अर्पित कर अपने कर्मों का प्रायश्चित करना चाहती थी वह...

कथाकार ने इसीलिए जेउति को गलत नहीं ठहराया है; बल्कि उन्होंने जेउति की अंतरात्मा की शुद्धता पर प्रकाश डाला है और साथ ही उन लोगों को कौंसा हैं जिन लोगों ने उसे बड़े होकर उसे गलत राह की ओर जाने पर विवश कर दिया ।

अपर्णा: जेउति के गाँव की लड़की थी अपर्णा...एक सफल पत्रकार और साहित्यिक के रूप प्रतिष्ठित अपर्णा को ही तो जेउति ने अपना आदर्श माना था और केवल उसके लिए अन्याय के विरुद्ध एक शब्द भी नहीं कहा । यह एक तरफ तो उसकी जेउति की महानता का कारण बना और वहीं अपर्णा के ग्लानि का कारण भी बना ।

ग्लानि की भावना:

सदा की तरह इस बार भी दो नारी के विश्वास के डोर को एक पुरुष ने तोड़ दिया । अपने दम पर न सही अपर्णा का वास्ता देकर उसके पति जेउति से वादा लिए; अपने बेटे की जान के बदले में उसको कलंकृत होने दिया । सत्य को असत्य के हाथ में बिंधने के लिए छोड़ दिया । और जब लाख लाख पैसों के बावजूद अपने बेटे को नहीं बचा पाया तो अपर्णा को सारी सच्चाई बताकर चिट्ठी लिख डाली, अपने नैतिक स्खलन का सामना करना हर किसी की बस की बात नहीं होती हैं । किन्तु अपर्णा का इस सबमें क्या दोष था ? वह तो शुरू से ही जेउति का भला चाहती थी । जेउति को आगाह करना चाहती थी; परंतु बेटे की आकस्मिक बीमारी ने उसे यह मोहलत नहीं दी थी । खैर!! जेउति और पति के चिट्ठी को पढ़ने के बाद वह अपने ही नजरों में गिर गई । जिस व्यक्ति को वह न्याय, साहस और सत्य की मूर्ति मानती आ रही थी...उसीने

विश्वासघात किया । उसके नाम पर जेउति से गुरुदक्षिणा के नाम पर उसकी सतता और निष्ठा छीन ली! अपने पति के इस अमानवीय कांड से वह आश्चर्यचकित रह गई थी । परम ग्लानि से उसका मन जल गया था । जेउति चली गई थी इस मर्त्य से बहुत दूर...जहाँ उसे यह बताना अब संभव नहीं था कि उसने कभी उससे ऐसा करने को नहीं कहा था । उसने ही तो जेउति को यह सिखाया था कि हमेशा सच का साथ देना, तो भला क्यों उसे झूठ बोलने को कहेगी ? वह दुखी थी, लज्जित थी और उसके आँखों से असहायता के आँसू टपक रहें थे...

"किसने तुम्हें प्रतिज्ञा से बांधा था जेउति ? नवारुण ने ? मैंने ? एसी भयानक प्रतिज्ञा से तुम्हें बांध सकती हूँ-ऐसा तुमने क्यों सोच लिया जेउति ? क्यों ? क्या मैं तुम्हारे नजरों में इतनी स्वार्थी थी ? इतनी निर्मम ?" [37]

अपर्णा की जिस छबि को मन में लेकर जेउति इस दुनिया से चली गई थी, अपर्णा उसे ठीक करना चाहती थी; उस गलफ़हमी को वह दूर दूर करना चाहती थी ।

"सत्येन इस ग्लानि को मैं कैसे वहाँ करू ? अपने मन में मेरी कैसी एक भयानक छबि लेकर चली वह लड़की ! मुझसे एक बार भी बिना मिले । मैं..."[38]

अगर सच्चाई सब के सामने नहीं आयी तो ग्लानि आजीवन उसक पीछा नहीं छोड़ेगी...और वह अपने आप को कभी माफ़ नहीं कर पायेगी; यह बात अपर्णा भली भाँति जानती थी । इसीलिए उसने सारी सच्चाई अखबार में छपवाने का निर्णय लिया था ।

आत्मविश्वासी और साहसी:

अपर्णा आत्मविश्वासी थी, उसे विश्वास था कि यदि उसमें प्रतिभा है तो निःसंदेह वह सत् और सफल पत्रकार बन पाएगी । जेउति की तरह वह भी सुबिमल फुकन के चंगुल में फँस गयी थी, उसके पीछे घूमती फिरती; अखबारों में लिखती । किन्तु जब उसने उसे शारीरिक संबंध स्थापित करने का प्रस्ताव दिया तब उसने साफ मना कर दिया । अपने प्रतिभा का सौदा वह

शरीर के बदले करने पर कतई राजी न थी । जिस प्रकार चोट खाया हुआ शेर हुंकार भरता है, वैसे ही फुकन ने भी जेउति के सारें रास्ते बंध कर दिये थे । उसे पत्रकारिता जगत के लोग नीच नजरों से देखने लगे थे; जैसे फुकन द्वारा व्यवहृत दूसरे लड़कियों को देखते हैं । उसने हार नहीं मानी, हिम्मत नहीं हारी । पत्रकारिता जगत के अच्छे और सच्चे दिशा को खोजकर निकाला और अपने आप को पुनःजीवित किया । लोगों के लांछन और अपमान को सहन कर उसे अपना ढाल बनाया था और एक दिन उसीसे उन्हें वापस प्रहार किया था । जिन लोगों ने उसे घृणा के नजरों से देखा था; उन लोगों का सर अब उसके सामने झुका रहता था । जेउति के साथ हुये अन्याय को सारी दुनिया के सामने लाने के लिए किसी प्रकार का कोई समझोता नहीं किया था उसने...अपितु अपने पति के कार्य को भी लोगों के सामने लाने को वह प्रस्तुत थी । उसने जेउति के शोषण कर्ताओं को बेनकाब करने का शपथ ले लिया था । अपर्णा के भीतर अपार साहस था, अन्याय के विरुद्ध लड़ने की शक्ति थी । जेउति की डायरी मिलते ही उसने निश्चय कर लिया था कि आनेवाले उस हर 'जेउति' को उसे बचाना है; जिसके शिकार के सुबिमल फुकन, मनोरमा, उत्पल आदि देवता रूपी राक्षस राह देख रहें हैं । उन सब लोगों का पर्दाफास करना हैं जो गुरु, परामर्शदाता एवं बुजुर्ग के नाम पर कलंक हैं । सत्येन को जेउति की डायरी सौंपकर उसने कहा था,

"सत्येन, यदि हमने सत्य का साथ देकर कलम नहीं उठाया तो फिर अन्याय और षड़यंत्र के शिकार होने वाले बहुत से लोगों के समक्ष अपराधी बनकर रह जाएँगे । जेउति के समक्ष भी अपराधी बने रहेंगे ।" – [39] - क्योंकि अपर्णा को पता था कि यदि उसने जेउति की पवित्रता और सच्चाई को सामने नहीं लाया तो जेउति और उसके जैसी तमाम लड़की दुनिया की नजरों गलत और चरित्रहीन बनकर ही रह जाएगी । कथाकार के इस विश्लेषण से नारी संवेदना की गंभीर दिशा का उन्मोचन होता है जहाँ उन्होंने नारी को सही प्रतिपादित करने के लिए हर सफल प्रयास किया हैं ।

III. एई समय सेई समय:

असम के राजनैतिक परिवेश को उजागर करनेवाले इस कथा में भी नारी ही अहम भूमिका निभाती हुई नजर आयी है । अदिति, कस्तुरी, काजरी तथा सुकन्या यँ चारों इस कथा के चार स्तम्भ हैं । चारों की अलग अलग सोच और विचार ने इस कथा को और अधिक आकर्षक बना दिया है ।

अदिति: एक प्रौढ़ नारी...जिसने अपने यौवन में स्वतंत्रता के गीत गाये हैं और संग्राम भी किए हैं । अपने पति के साथ आदर्शगत मतभेद होने के कारण अलग रहने वाली अदिति ने कस्तुरी और काजरी को पाला था । वह दोनों की यशोदा मय्या थी, भले ही उसने उन दोनों को जन्म न दिया हो; परंतु उन्हें हमेशा अपना ही हिस्सा माना । अपने दोनों बेटियों को एक सुंदर और स्वच्छ भविष्य देने के लिए न जाने कितने मानसिक अत्याचारों को उसने सहन किया । शारीरिक दुःख और जख्मों का इलाज किया जा सकता हैं परंतु मानसिक घाव मनुष्य को ज्यादा से ज्यादा कष्ट प्रदान करता है, रह रह कर वह घाव मनुष्य को दर्द देता है ।

दृढ़ एवं प्रबल आत्मविश्वास:

अपने दृढ़ मनोबल के कारण ही अदिति इस कटु और स्वार्थी समाज में सीना तानकर खड़ी रह पायी । तुफान आते रहें आर वह संभलती रही । अपने आत्मविश्वास के कारण वह अपने दोनों बेटियों को समाज के कु-प्रभावों से मुक्त रख पायी और उन्हें अन्याय के विरुद्ध लड़ना सिखाया । अनेक प्रयासों के बाद अदिति अपने आप को प्रतिष्ठित कर पायी थी । अपने बेटियों को उज्जल भविष्य देने के लिए उसने अपने व्यक्तित्व को इतना दृढ़ बनाया ताकि लोग उनपर कोई उँगली न उठा पाये । पति से अलग रहनेवाली स्त्री को किस नजरिए से लोग देखते है, यँ तो सबको पता है । परंतु अपने आत्मविश्वास के कारण अदिति उन नजरों से अपने आप को तथा अपने बच्चों को बचाने में सक्षम होती हैं ।

ममता की प्रतिमूर्ति:

अदिति केवल एक स्त्री ही नहीं थी, बल्कि वह एक माँ भी थी; उसके अंदर ममता और अपने बेटियों के रक्षा के लिए वह दुर्गा बन जाती थी । काजरी उसकी दोस्त की बेटी थी, जो सरकार के खिलाफ़ जिहाद के लिए निकल पड़ा था और अपने बच्चे की ज़िम्मेदारी उसपर सौंप गया । अदिति के पति चन्दन ने उस बच्चे को अपने साथ रखने से मना कर दिया क्योंकि वह राज्य के शक्तिशाली नेता थे और वह मासूम सरकार के खिलाफ़ लड़नेवाले का संतान ! अदिति किसी भी कीमत पर बच्चे के भविष्य को सुरक्षित रखना चाहती थी और इसीलिए दोनों अलग होकर रहने लगे । जब काजरी चार साल की थी; तब उसे एकदिन कस्तुरी सड़क किनारे पड़ी मिली...मानवीयता का परिहास !! नवजात शिशु को किसी ने त्याग दिया था । इन दोनों को बच्चों को उसने अपने ममता के आँचल से बांधकर रखा । लोगों ने तरह तरह की बातें कही; अदिति को बदनाम करने की कोशिश भी की गई थी । परंतु कोई लाभ न हुआ । जब स्त्री अपनी अंदर की ऊर्जा को पहचान जाती है, उसे बाहरी तूफान हिला नहीं सकती ।

मानसिक अंतर्द्वंद:

अपने अतीत और वर्तमान के बीच फंसी अदिति के मन में अनेक द्वंद थे । बेटियाँ जब बड़ी होने लगी तो सबसे पहले उसे धीरे धीरे यह बात खलने लगी कि कही पति से दूर होकर उसने गलती तो नहीं कर दी...पर दूसरे ही क्षण अपने आदर्श के स्मरण से वह अपने आप को संभाल लेती । दोनों बेटियों के बीच में जो भी मनमुटाव रहा; उसके लिए भी अदिति अपने आप को ही जिम्मेदार समझती थी । उसे इस बात का दुख था कि दोनों को एक जैसा परिवेश देने के बावजूद भी दोनों इतने अलग कैसे ? अपने प्रश्न का उत्तर वह खुद खोजती है और सोचती है कुछ चीजें और गुण मनुष्य अपने खून के रिस्ते से वहाँ करते हैं । इसीलिए एक जैसा परिवेश दो व्यक्तियों में अलग अलग मानसिकता का जन्म देती हैं । कस्तुरी के प्रति काजरी के मन में जो

नकारात्मक भावनायेँ थी उन सबको जानने के बाद वह और अधिक विचलित हो उठी थी । अपने मित्र प्रभाकर से वह कहती है,

"...काजरी की समस्या को जानने से पहले अपने बारें में मेरी धारणा बहुत अच्छी थी । मैं अपने आप को एक योग्य मातृ के रूप में सोचती थी । मेरी धारणा यह थी कि मैंने अपने दोनों बेटियों को बिना किसी त्रुटि के बड़ा किया हैं । राजनीतिक नेता के साथ शादी होने के बाद भी किसी राजनैतिक क्षेत्र में हस्तक्षेप किए बिना मैं सच्चाई के राह पर चल रही थी; जिसे लेकर मैं गर्व करती थी । अब भी करती हूँ । किन्तु अब उसके साथ साथ अनेक प्रश्न भी मेरे मन उत्पन्न हो रहे हैं, जो पहले नहीं थे ।" [40]

कस्तुरी: अदिति की दूसरी बेटी, जिसे उसने सड़क किनारे से उठाकर अपनी आँचल में जगह दी थी । कस्तुरी यह सच जानती थी और शायद इसीलिए अपनी माँ के प्रति उसके मन में काजरी से भी अधिक श्रद्धा थी । वह अत्यंत शांत और सहज लड़की रही है, किसी प्रकार के मान-अभिमान को पकड़कर अपनी माँ को वह कष्ट देना नहीं चाहती थी; क्योंकि उसे पता था कि उन दोनों के लिए अदिति ने कितना त्याग किया हैं । उस अहसान का ऋण अपनी भक्ति और सेवा से चुकाने के लिए तत्पर थी कस्तुरी ।

प्रतिभाशाली किन्तु अंतर्मुखी:

कस्तुरी पढ़ने में उतनी तेज़ नहीं थी जितनी की उसकी बहन काजरी थी । वह अत्यंत संवेदनशील और कल्पनाशली व्यक्तित्व के अधिकारी रही है । चुप-चुप के कविता और कहानियाँ लिखती, किन्तु किसी को नहीं दिखाती थी; वह तो सुकन्या थी जिसने उसकी लेखनी देख ली और जबरदस्ती अखबार में छपवा दिया । अपने जन्म और परवरिश को लेकर भी वह कुंठित थी । जो अदिति ने बताया उसे ही सत्य मानकर आगे बढ़ जाती और उस पर दोबारा कोई प्रश्न न करती । अपने आप में ही सिकुड़कर रहती, अपने दुखों और भावनाओं को सबसे छिपाती फिरती और वही सब परोक्ष रूप से उसके कलम के शब्द बन जाते...

मानसिक अंतर्द्वंद:

जो व्यक्ति संवेदनशील होते है उनके में में द्वंद उत्पन्न होना अति स्वाभाविक है । कस्तुरी को जब यह ज्ञात होता है कि काजरी के मन में उसके प्रति क्षोभ और आक्रोश हैं तब वह हैरान हो जाती है । काजरी को वह बहुत प्यार करती थी, उसे बहुत दुख हुआ यह सोचकर कि उसके प्यार को काजरी नहीं समझ पायी । उस दिन से वह और अधिक सिकुड़ गई । अदिति नामक ममतमयी नारी ने उसे पुनः जन्म दिया, उसे बड़ा किया; वह घर जिसे कस्तुरी अपना मानती है...उसी घर में आज उसके बहन ने यह घोषणा कर दिया कि अदिति ने उसे इस घर उसे लाकर भूल किया है । उसका अधिकार, प्यार, प्राप्ति सब कुछ किसी बाहर से आए हुए व्यक्ति के बाँट दिया है । अपने आप को अनाहूत अतिथि के रूप आविस्कार करती है कस्तुरी, जो उसके लिए अति वेदनादायक रहा । एक पल के लिए तो उसके मन में खयाल आया कि यहाँ से कही दूर चली जाये, पर दूसरे ही क्षण माँ की ममता उसे जकड़ लेती हैं...

"काजरी उसे अनाहूत और अनाकांक्षित समझती है ।

काजरी के हिस्से की खुशी उसने छीन ली है-ऐसा सोचती है वह ।

उसकी अनुपस्थिति को अच्छा मानती है काजरी ।

वह एक अप्रिय सत्य है, एक प्रिय सत्य के विरुद्ध रहा एक अप्रिय सत्य ।

किन्तु क्या माँ की ममता और उनका प्यार झूठा है ? क्या माँ असत्य है ? क्या माँ ने उसे कभी करुणा की दृष्टि से देखा है ? क्या उससे प्यार नहीं करती ?

अब वह क्या करेगी ? कौन से सत्य को वह ग्रहण करेगी ? क्या करना उचित होगा अब ?"[41]

काजरी: अदिति की दूसरी बेटी काजरी कस्तुरी से बहुत अलग थी । किसी से अपनी मन का बात बाँटती नहीं, वह अंतर्मुखी और जिद्दी थी । उसे ऐसा लगता था कि उसके हिस्से की खुशी को माँ ने कस्तुरी के साथ बाँटा है ।

अत्यंत यथार्थवादी:

काजरी का मानना यह था कि अगर कस्तुरी उनके जीवन में न आयी होती तो फिर माँ का सारा प्यार और ध्यान उसपर ही केन्द्रित रहता । साथ ही जीवन में आगे बढ़ने हेतु जिन सुविधाओं की आवश्यकता होती हैं, वह सारें उसे मिल जाती । अपने स्वार्थ में वह यह देखना भूल गई थी कि उसकी माँ ने एक 'जीवन' का उद्धार किया है । अपने आक्रोश को वह ज्यादा दिनों तक छिपा न सकी । और एक दिन जब अदिति के अपने दोस्त की बेटी असमी को अपने घर में रखना चाहा तो वह चुप नहीं रह पायी । उसे ऐसा लगा जैसे उसकी सुविधायें और अधिक कम हो जाएगी,,,यथा-

"चाहिए था, मुझे और अधिक सुविधा और अवसर मिलना चाहिए था । बहुत से अवसर मेरे हिस्से के थे; उन अवसरों से तुम ने मुझे वंचित किया हैं ।" [42]

उच्चाकांक्षी:

काजरी अत्यंत उच्चाकांक्षी थी । उसे पहले ऐसा लगता था कि कस्तुरी के आने से उसके हिस्से की सुविधा कम हो गई है । वह उससे नफ़रत करती थी और दूसरी तरफ कस्तुरी उसे बहुत प्यार करती थी । पर धीरे धीरे अपने माता-पिता के अलग रहने में भी वह शिकायत करने लगी । क्योंकि उसे लगता था कि राजनैतिक क्षमता के अधिकारी उसके पिता उसे माँ से बेहतर जिंदेगी दे सकते थे । माँ की ममता को वह महसूस तो करती पर कभी कभी अपने भविष्य को लेकर वह हद से ज्यादा प्राक्टिकल हो जाती है । अपने पिता का पक्ष लेते हुए वह अदिति से सवाल करती है,

“बुरा मत मानना यह सवाल कर रही हूँ- जब तुम पिताजी को छोड़कर चली आयी थी, क्या उस समय अपने इस सिद्धान्त को पिताजी के नजरों से विचार करके देखा था ?”[43]

उसके मन में सवाल था...केवल सवाल...जिसका उत्तर वह अपने माँ के अंदर खोजती फिरती थी । कथाकार ने यहाँ प्रस्तुत चरित्र के माध्यम से समाज ने बिरूपता और संघर्ष को दिखाया है । पिता-माता के अलग रहने से एक बेटी पर कैसा असर पड़ सकता है; उसपर प्रकाश डाला गया है । आशय यह है कि यह समाज पुरुष और नारी दोनों से सम्पूर्ण होता है और इसे विकसित करने में भी दोनों की समान भूमिका होती हैं । इसीलिए स्त्री को अपने सिद्धांतों के बारें में सोचने-विचारने का अवसर प्राप्त होना जरूरी है । अगर अदिति के विचारों व आदर्शों को उसके पति चन्दन ने महत्व दिया होता, तो काजरी के मन में अपनी माँ के प्रति ऐसे मनोभाव नहीं रहते ।

सुकन्या : अमीर माँ-बाप की एकमात्र संतान सुकन्या कस्तुरी की दोस्त थी और उसके पिता अदिति के मित्र रहे थे । एक प्रभावशाली और अद्भुत व्यक्तित्व के अधिकारी सुकन्या का मन पानी की तरह निश्छल था तो दूसरी तरफ वही मन जिद्दी और साहसी भी था । किसी प्रकार के अन्याय को वह सहन नहीं कर सकती थी ।

अध्ययनशील और परोपकारी :

सुकन्या दिखने में आम लड़कियों की तरह ही थी किन्तु उसके मन में एक दूसरी ही दुनिया बसती थी...दिखाती नहीं थी; बस अपने आप मन में रहे प्रश्नों को सुलझाने का प्रयास करती । किताबें उसकी साथी थे; भिन्न स्वाद के किताबों से वह ज्ञान बटोरती फिरती । शहर के व्यस्त व्यवसायी पिता-माता के पास उसके लिए बिल्कुल समय नहीं था । अकेलेपन ने उसे घेर रखा था किन्तु उसने इसका नकारात्मक प्रभाव अपने ऊपर पड़ने नहीं दिया । यह उसका आत्मविश्वास ही था, जिसने उसकी सहायता की; उसने किताबों से दोस्ती कर ली । दूसरों की मदद करना, उनका भला करना उसकी रुचि बन गई । कस्तुरी की हमदर्द बनी, उसके सृजन क्षमता को नया आकार दिया, असमी को षड़यंत्र से बचाया और स्वयं उसमें फँस गयी । उसे

बदनामी से दर नहीं था... क्योंकि उसे पता था जो वह कर रही है वह गलत नहीं था । अपनी जिंदेगी को वह दूसरों की खुशी के नौंछावर करना चाहती थी,

"...शांति । मुझे शांति चाहिए । मैं जो भी काम करती हूँ उन सबसे मुझे शांति मिलती हैं । पर इतना मेरे लिए काफी नहीं है, समझी!! चिड़िए के पंख से आसमान को ढका नहीं जा सकता है । मुझे आकाश के समान शांति चाहिए और इसीलिए मैंने शुभंकर सर का एन. जी. ओ. जॉइन किया है ।"[44]

स्पष्टवादी:

मनुष्य का निर्भीक बन पाना ही उसकी सबसे बड़ी ढाल होती है । सुकन्या ने यह गुण अर्जित किया था । जैसा नाम वैसे ही उसके गुण थे । उसे पता कि आज की पृथ्वी किसी के लिए नहीं रुकती । ख़ासकर लड़कियों के लिए तो बिल्कुल ही नहीं । क्योंकि उन्हें तो बराबरी करने का मौका ही नहीं देना चाहती हैं यह समाज । सुकन्या ने अपने आप को इतना सक्षम बनाया कि कॉलेज का हर व्यक्ति उसे जानता और पहचानता था । बाप के रुतबे से नहीं बल्कि अपने दम पर उसने यह मुकाम हासिल की थी । जब कॉलेज उन्नयन समिति की बात आयी तब उस कमिटी में लड़कियों की कोई प्रतिनिधि नहीं थी । तो सुकन्या ने बेझिझक अपने आप को उसमें शामिल कर लिया । उसका यह स्पष्ट मनोभाव उसकी साहस और हिम्मत का प्रतीक हैं, यथा-

"बाबी भय्या, यँ दुनिया ही ऐसी है । आ हार्ड प्लेस टु लिव । कही कोई दरवाजा नहीं खोल देते हैं । कोई जगह भी नहीं छोड़ देते हैं । इसीलिए मैंने अपनी पॉलिसी ही बदल डाली है । कोई प्रापोज करेगा और कोई छेकन्द करेगा...उसके लिए क्या मैं रुकी रहूँगी ? और अगर नहीं करते है तो ?" [45]

समाज व लोगों के लिए कुछ करने के मनोभाव ने हमेशा उसे हमेशा से प्रोत्साहित किया था; उसने कॉलेज के निर्वाचन में भी उसने हिस्सा लिया था और जीती भी थी । वह कुछ बदलना चाहती थी, कुछ अलग करना चाहती थी...जिससे लोगों के दिलों में बुराइयों के स्थान पर

अच्छाइयाँ भरी जा सके; यही उसका प्रयास था । अपने इस कार्य में वह बहुत सफल भी रही । कथाकार का यह पात्र सबसे आकर्षक और प्रभावदायी रहा है; जिससे युवा समाज अनेक बातें सीख सकते हैं ।

IV. मायाबृत्त:

मायाबृत्त एक परिक्रमा हैं...परिक्रमा जीवन की; यह अपने अनुभवों की यात्रा है । एक छोटी सी लड़की के स्वप्न का परिणाम है । जहाँ बहुत से लोगों की भावनायें जुड़ी हुई है । रीता चौधुरी ने यहाँ साहस और प्रत्यय का बेमिसाल उदाहरण प्रस्तुत किया है । मनुष्य अगर ठान लें तो असंभव कुछ भी नहीं है । कथा की नायिका नीरा इसका प्रमाण है।

नीरा : कथा की नायिका है, जिसका चरित्र अत्यंत साहसी और प्रोत्साहनदायक रहा है । अपने आप को नीरा ने नारियल के जैसे गढ़ लिया था । जो बाहर से कठोर और अंदर से कोमल; जिसका तात्पर्य केवल मोल समझने वालों को ही समझ में आता हैं ।

गंभीर आत्मप्रत्यय:

नीरा के भीतर गंभीर आत्मप्रत्यय था । बचपन मैं काली होने के कारण लोग उसे चिढ़ाते थे और शिशु नीरा के मन को दुख होता था । धीरे धीरे नीरा ने अपने देह के रूप को नहीं बल्कि अपने मन के रूप को पहचानने की कोशिश की, उसका खोया हुआ आत्मविश्वास लौट आया । अपने मित्र सुवर्ण की सहायता से अपने भीतर के शक्ति को पहचाना । उसने कसम खा ली कि चाहे जो कुछ भी हो जाए, वह हार नहीं मानेगी और तब तक लड़ेगी जब तक अपने लक्ष्य प्राप्त नहीं कर लेती । कहते है सोना तपने से अधिक उज्ज्वल हो उठता है, नीरा के व्यक्तित्व के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ था । वह अपने आप से वादा करती है कि हर हाल मैं वह अपने अस्तित्व को जिंदा रखेगी । यथा-

"मैं कभी आत्महत्या नहीं करूँगी । किसी को भी मुझे मारने नहीं दूँगी । मैं लौकी का पेड़ बनकर उगूँगी । *जरा* (असम प्रांत में प्राप्त एक पेड़) का पेड़ बनकर उगूँगी । कमल बनकर खिलुंगी । मैं नीरा बनकर रहूँगी । नीरा ही बनकर रहूँगी ।

उसने अपने आप से कथा था और अपने लिए एक जीवनादर्श स्वयं चयन करके स्थिर कर लिया था । उसने अपने भीतर कभी न पिघलने वाले मूल्यों का घड़ा समेट लिया था ।"[46]

नीरा ने अपने आप से किया हुआ वादा निभाया...उपन्यास के अंत तक उसने अपना यह विश्वास अटूट रखा और अपने आप को कभी विचलित न होने दिया ।

दृढ़ एवं शक्तिशाली व्यक्तित्व:

अपने आप पर संयम रख पाना अत्यंत कठिन परिलक्षित होता हैं । नीरा अब एक प्रतिष्ठित साहित्यकार और दायित्त्वशील व्यक्तित्व के अधिकारी है । जब उसने तय कर लिया था कि अब वह सुवर्ण के आदर्श अर्थात प्रकृति के जीवन का हिस्सा बनेगी तब उसे ब्रजेन नहीं रोक पाया था । अपने पति की संदेह से भरी निगाहें पहले तो उसे चुभती थी परंतु बाद में वही जाकर साहस का कारण बन जाता है । नीरा का सदैव यह मानना रहा कि अगर किसी व्यक्ति ने कोई गलत काम न किया हो तो उसे किसी से क्या छुपाना और क्या डरना ? नीरा के इस व्यक्तित्व के सामने ब्रजेन की हर गलत प्रयास असफल रह जाती और वह अपनी लक्ष की ओर एक कदम आगे बढ़ जाती ।

अन्याय का सबल प्रतिवाद:

बचपन से ही नीरा ने अन्याय का प्रतिवाद किया है । पशु-पक्षी की हत्या और समाज के ढकोसलों का उसने सदा विरोध किया है । एक बार एक मृग को बचाने के लिए वह अकेली पूरे इलाके के लोगों से भीड़ गई गई थी; तब वह बच्ची थी । जैसे जैसे वह बड़ी हुई उसकी प्रतिवाद की तीव्रता बढ़ती गई । शादी के बाद ब्रजेन ने एक बार घर पर पूजा रखी और उसपर अपनी

माता के नाम बलि चढ़ाने के लिए एक अबोध बकरी लाकर खड़ी कर दी गई । नीरा यह सुनकर बदहवास हो चली...उसने इसका प्रबल विरोध किया । यथा-

"माँ के नाम पर पूजा करा रहे हो, सही है; पुजा करके छोड़ दो । ये रास्ता भी तो है । तुम्हारे विश्वास का सम्मान करती हूँ । मैं धर्म विरोधी नहीं हूँ और न ही अविश्वासी किन्तु इस हत्या को समर्थन नहीं करती हूँ । अपने कल्याण के लिए दूसरे के अकल्याण नहीं कर सकती हूँ । बलि नहीं दी जाएगी । किसी भी कीमत पर नहीं होगी ।"[47]

उस दिन नीरा उस बलि को नहीं रोक पायी थी, घरवालों ने उसे बंदी बनाकर अपने कल्याण के नाम पर एक मासूम पशु की हत्या कर डाली थी । नीरा को यह अहसास हो गया था कि बिना क्षमता के कोई किसी की बात नहीं सुनता हैं । बचपन में वह मृग-शावक को इसलिए बचा पायी थी क्योंकि उसके पिता उस इलाके के क्षमताशाली व्यक्ति थे; इसीलिए लोग उनसे डर गए थे । बलि की उस रात से नीरा ने प्रण लिया कि अपने आप को इतना सक्षम और शक्तिशाली बना लेगी ताकि सामने हो रहे हर अन्याय को वह रोक सके । नीरा ने अपना प्रण पूरा किया था और यहाँ तक कि पशु-पक्षी से जुड़े व्यवसायी को छोड़ने पर अपने पति को भी उसने मजबूर कर दिया था । केवल यही ही नहीं अपनी गोमुख की यात्रा में भी उसने पीड़ितों की सहायता की थी । नीरा ने अपने साथियों के साथ मिलकर बस में रहे जाट परिवार के दोनों लड़कियों को आजाद कर दिया था । जिस समाज व परिवार में लड़की को 'वस्तु' से ऊपर नहीं माना जाता हो, वैसे समाज व परिवार के होने से न होना ही बेहतर हैं । जिसे हम अपना रक्षक मानते हैं वे ही अगर भक्षक की भूमिका निभा रहें हो तो अकेले रहना उससे सौ गुना बेहतर है । इस तरह अपनी पूरी जिंदेगी में नीरा ने अन्याय का विरोध किया था ।

अनुराधा: एक ऐसी साहसी लड़की, जो अपनी इच्छाओं और समाज के कुरीतियों को खुलकर सबके सामने रखने का साहस करती । एक परंपरागत समाज व परिवार की बहू जिसे आदर्श पत्नी और बहू बनाने के लिए तरह तरह के दबाब डाले जाते है । अनुराधा के पति में

संतान उत्पन्न करने की शक्ति नहीं है, लेकिन उसके घरवाले इस सत्य को स्वीकार करने से इतराते है ।

समाज के ढकोसलों का विरोध:

अन्याय का प्रतिवाद करनेवाला ही सही अर्थ में साहसी होता है । अनुराधा का व्यक्तित्व भी कुछ ऐसा ही था । अपने घरवालों के इस अन्याय को वह सहन नहीं कर पा रही थी । जो कमी उसमें उसमें नहीं है, बार-बार उसके लिए उसीकी दोषी करार दिया जा रहा है । एक पुरुष को ही सदा प्रथम अधिकार क्यों प्राप्त होता है, स्त्री को क्यों नहीं? उसकी सक्षमता अक्षमता पर कोई क्यों सवाल नहीं उठाता है, क्यों वह सारें सवाल हमेशा स्त्री के तरफ ही मुड़कर किए जाते हैं ? जब मनुष्य शारीरिक और मानसिक रूप से अतृप्त रहता हैं, उसे संसार का कोई तीर्थ या मंदिर संतुष्ट नहीं कर सकता हैं । अनुराधा समाज के इन ढकोसलों पर व्यंग करती है । जो परिवार और पति संतान उत्पन्न करने के अभिप्राय से अपनी बहू और पत्नी को किसी दूसरे पुरुष के शारीरिक संबंध बनाने के लिए इशारा करते हैं-वह भला कैसे उस संबंध के काबिल हुए ? और यदि यही संबंध स्त्री अपनी मर्जी से करें तो वह बदचलन मानी जाती है! वाह रे समाज के दस्तूर...! अनुराधा ने संबंध स्थापित किया था बांटी के साथ किंतु वह संबंध उसने संतान उत्पत्ति के लिए नहीं बल्कि शरीर की क्षुधा को मिटाने के लिए किया था ।

स्पष्टवादिता एवं साहसी:

अनुराधा को शारीरिक संतुष्टि प्राप्त नहीं हुआ था...वह इस सत्य को स्वीकार करने की शक्ति रखती है । बांटी को उसने स्वयं यह प्रस्ताव दिया था । पहले तो बांटी ने उसे ठुकरा दिया था परंतु बाद में उसके मन में अनुराधा के प्रति सहानुभूति पैदा होती है । अपनी मन की इच्छा विशेषकर शरीर की भूख की बात कह पाना इतना भी आसान नहीं है-फिर भी उसने कहा, क्योंकि उसका शरीर अतृप्त था-

“नहीं, धक्के मारकर निकालने की जरूरत नहीं है, मैं खुद ही चली जाऊँगी । मेरे जगह पर तुम होते तो तुम भी समझ पाते शरीर की ज्वाला किसे कहते है ।

‘छिः’

एक नामर्द पति के साथ सुहाग रात से लेकर दस साल गुजारने के बाद एक स्त्री पर क्या गुजरती है; तुम क्या समझोगे! निकालने का कोई रास्ता नहीं । न ही शिक्षा है और न ही माँ का घर । कुछ भी नहीं है । एक ही तो जीवन है बांटी । मुझे कुछ नहीं मिला ।”[48]

अमृता-निकिता: गोमुख यात्रा में नीरा के सहयात्री थी यह दोनों...दो भिन्न प्रांत और परिवेश से आयी इन दो लड़कियों ने समाज के तथाकथित नियमों का उलंघन करते हुए सदा अपनी मन की बात सुनी । अमृता एक अत्यंत गरीब घर की लड़की थी, जिसे किसी उग्रवादी संगठन के नेता ने ज़ोर-जबर्दस्ती अपनी पत्नी बना लिया था । दूसरी तरफ निकिता उच्च-शिक्षित आधुनिक नारी, जिसका पति उसके स्थान पर उसके तन और धन से बेसुमार मोहब्बत करता है ।

यथार्थवादी और स्वतंत्र विचार के धनी:

दोनों पात्र स्वतंत्र विचार के धनी थे । उन्हें अपनी मन की आवाज़ सुनाई देती थी, औरों की तरह मुक बनने का नाटक नहीं करती थी । निकिता अपने पति को छोड़कर आयी थी, संतान नहीं होने के वजह से माया भी न रहा था । समाज व घरवाले उसे ताना मारते, नफरत करते, किन्तु उसे इन सबसे कोई फर्क नहीं पड़ता था । अपने अस्तित्व की पहचान उसवक्त उसके लिए सबसे बड़ा सत्य था । वह नीरा से कहती है-

"...घरवाले मुझे कुछ नहीं कहते, कहकर कोई फ़ायदा भी नहीं । समझाने भी नहीं गई । माँ-बाबा को कष्ट हुआ, शर्मिंदा हुए हैं वे...किन्तु उन सबसे मेरा दर्द ज्यादा बड़ा है । एक हृदयहीन समाज मुझे अच्छा कहते है या बुरा, उससे मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता है । मरने के सती कहेंगे या असती, प्रशंसा करेंगे या घृणा यह सोचकर क्या फ़ायदा ? मरने के बाद तो केवल अनंत अंधकार ।" [49]

जिंदेगी को इस नजरिए से देखने वाले बहुत कम ही मिलते हैं, जो दूसरों के खुश करने के लिए नहीं बल्कि खुश होकर जीते है; निकिता ऐसी थी । मनुष्य का जिंदा रहना ही सत्य है, अमृता ने इस सत्य को बहुत करीब से महसूस किया था । उग्रवादी नेता एवं पति ने शादी करने के प्रतिदान स्वरूप उसके घरवालों रहने के लिए एक घर बना दिया था और गाँव भर में उसके घरवालों को दूसरे ऊँची नजर से देखने लगे थे । लेकिन पति के मृत्यु के बाद जब वह गाँव वापस लौट आई थी तब वह रुतबा और धन गायब हो चुका था; लोग उनपर थूकने लगे थे । जो लोग पहले उसकी माँ को सभाओं में बुलाया करते थे, अब वे ही उनको देख ताने मारने लगे थे । अमृता ने अनुभव किया कि अगर इस समाज में जिंदा रहना है तो इसी के कायदे को अपनाना होगा । क्षमता या तो फिर पैसा...इन दोनों में से एक का होना अनिवार्य हो गया था उन लोगों के जीवन के लिए...अमृता ने संगठन के ताव-आव-भाव को आज़माया तो कभी अपनी रूप की दुहाई देकर अपना काम निकलवाया । हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी कहा है- 'सबसे बड़ी चीज है 'जिजीबिसा'... जिसके लिए मनुष्य दिन रात संघर्ष करता है । जब बात जीने की हो तो इंसान अपना रास्ता ख़ुद बना ही लेता है । अमृता ने भी नीरा से यही कहा था-

"इस दुनिया में टिके रहना बहुत कठिन है नीरादी । और सबसे कठिन है गरीब और अकेली जबान विधवा का टिके रहना । लोग जिस सभ्यता की बात करते है नीरादी, बड़े बड़े नीति-आदर्श, धर्म-मार्ग आदि के बात करते हैं, वे सब खूबसूरत, जबान, गरीब और अभिभावकहीन विधवा नहीं हैं; इसीलिए वें ऐसा कहते हैं । अगर होते तो वें ही अन्य प्रकार का शास्त्र लिखते ।

समाज का ढाँचा ही बदलकर रख देते । तब शायद पाशविकता शब्द मनुष्यत्व से ऊपर होता...” [50]

5.3. नारी संवेदना की दृष्टि से नारी पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन:

दोनों कथाकारों की नायिकाएँ चतुर हैं, बुद्धिमान है परंतु वें उतनी ही उदार और संवेदनशील भी है । दोनों के नायिकाओं ने संघर्ष किया और हर बार एक ऐसा पुरुष उनका साथ निभाते है जो स्त्री की सम्मान करता हो, उसकी भावनाओं की कदर करता हो । चाहे वह सारंग का श्रीधर हो या फिर चंद्रप्रभा का साधुकुमार; मंदा का मकरंद हो या फिर नीरा का सुवर्ण । वे कहने को तो उनके जीवन साथी नहीं थे, लेकिन उम्र भर उनका साथ निभाया...कहने का आशय यह है कि दोनों उपन्यासकारों ने पुरुष विहीन समाज की और संकेत नहीं किया है और न ही ‘नारीवाद’ का ढिंडोरा पीटा है । वे एक ऐसा समाज की ओर संकेत कर रहीं हैं जहाँ ‘जननी’ की इज्जत की जाए, जहाँ उन्हें कोई बोझ न समझे और न ही उन पर अपनी इच्छाओं को थौंपकर उनके इच्छाओं का गला घौंट दिया जाए । वे सही माने में जिंदा रहने के लिए एक जमीन चाहती है, जहाँ उसके पैरों तले जमीन रहे और उनके इच्छाओं व सिद्धांतों को सुना जाये । पुरुष और नारी के मिलन से ही तो समाज परिपूर्ण होता है । दोनों के मिलन के अभाव से तो पूरी सृष्टि की थम जाएगी । जो जीवन का आधार है, उसे भला क्यों इतना सताया जाता है ?? उनके दुखों का अंत क्यों नहीं होता ? ऐसे अनेक सवालों को इन दोनों उपन्यासकारों ने पाठकों के सामने रखा हैं ताकि वे इनकी मार्मिकता को अनुभूत कर सकें और नारी संवेदना की जड़ को पहचान सकें । नारी समाज में स-सम्मान जीना चाहती है और जब तक यह अधिकार उसे नहीं मिलेगा तब तक उनका यह संघर्ष जारी रहेगा । दोनों उपन्यासकारों के पात्रों के माध्यम से यहीं स्वर बार बार ध्वनित होता हैं । स्त्री और पुरुष के अलग होने से या उनमें फर्क करने उनके संतानों पर बुरा असर पड़ता है । ‘सारंग और रंजीत’ के बीच में रंजिसों के वजह से ‘चन्दन’ पिसता है, तो कही ‘अदिति और चन्दन’ के आदर्शों के लड़ाई में ‘काजरी’ को मानसिक कष्टों का सामना करना पड़

रहा है । दोनों ही कथाकारों ने अपने पात्रों के माध्यम से मूलतः यही दिखाने का प्रयास किया है स्त्री और पुरुष का सही तालमेल होना समाज व उनके जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक होता है । समाज का संतुलन तभी बरकरार रह सकता है, अन्यथा समझोते में जिंदेगी गुजारनी पड़ जाती है ।

हाँ, कुछ असमानतायें जरूर रहीं है । जैसे रीता चौधुरी के उपन्यासों की अपेक्षा मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में परिस्थितियाँ स्त्री के लिए अधिक प्रतिकूल रही हैं और उनके स्त्री पात्रों की मानसिक अवस्था अधिक अस्थिर और आक्रोशमूलक नज़र आती है । शारीरिक रूप में वे अधिक शोषित परिलक्षित होती हैं । लेकिन यह केवल भौगलिक और सामाजिक भिन्नता के कारण हुआ हैं ; क्योंकि नायिकाओं की जीवन की परिस्थितियाँ व चुनौतियाँ अलग अलग रही हैं । अन्यथा दोनों कथाकारों की मूल भावना एक ही रही हैं, लड़ने की वजह एक ही रही हैं-वह है 'आत्मप्रतिष्ठा'। दोनों कथाकारों का मूल उद्देश्य नारी को समाज में प्रतिष्ठित कराना तथा उसे अपने अस्तित्व से परिचित कराना हैं ।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अपने उपन्यासों के चरित्रों के माध्यम से दोनों कथाकारों ने समाज में जागरूकता लाने का प्रयास किया हैं । मैत्रेयी पुष्पा और रीता चौधुरी- इन दोनों कथाकारों ने उन सामाजिक रीति-रिवाजों को धिक्कारा हैं; जिस सबों ने मिलकर स्त्री के उड़ने के पंख हर बार काट दिये हैं । पश्चिमी उत्तर प्रदेश से लेकर हरियाणा तक फैली हुई 'खाप पंचायत' का दोनों ने खुलकर विरोध किया हैं । विविध नारी पात्रों के माध्यम से पाठकों को उन मानसिक समस्याओं से रूबरू होने का अवसर मिला जो आए दिन उनके साथ अथवा आस-परोस में उत्पन्न होती रहती हैं । यथार्थ ही प्रकृतार्थ रूप में साहित्य की पटभूमि है और उपरोक्त पात्रों की समस्याएँ इस बात की गबाही हैं । उनके मन का कसोट उन्हें इसकदर बलिष्ठ बना देती हैं कि वे दुनिया के किसी भी शक्ति से सामना करने के लिए प्रस्तुत हो जाती हैं । मैत्रेयी पुष्पा कहती है कि, " नैतिकता क्या होती है, क्या नहीं होती, स्त्रियाँ नहीं जानतीं । नैतिकता का

दावा करनेवाली और मर्यादा का मुकुट पहननेवाली स्त्री के संदर्भ में भी यह कथन बाकायदा लागू होता है, इसलिए कि नैतिक-अनैतिक माने जाने वाले नियम और उलंघन की सजाएँ मुकर्रर करते समय औरतों की राय नहीं ली गई । उनकी नैसर्गिक इच्छाओं, भावनाओं, अर्जित की हुई योग्यताओं, स्वाभाविक क्षमताओं तथा धैर्यपूर्वक कमाई हुई कार्य कुशलताओं के मद्देनज़र सही-गलत, वैध-अवैध का विधान नहीं बनाए गए ।" [51] इसीलिए अब नारी इस सब पारंपरिक झमेलों से मुक्त होकर आगे बढ़कर अपना रास्ता खोजना चाहती हैं; जहाँ पर वह अपनी पहचान स्वयं बनाने में समर्थवान होंगी । डर तभी मनुष्य पर हावी हो सकता है; जब उसका आत्मविश्वास साथ छोड़ देता है । पर यहाँ यही उनका परम अस्त्र है; उन्हें पता हैं डरने से समाज उन्हें और डरायेंगे...और अधिक कुचलेंगे । अतः डर को भगाना होगा और यथार्थ का सामना कर उस डर को जितना होगा; क्योंकि बिना उसने मंजिल तक पहुँचना नामुमकिन है ।

संदर्भ सुंची-

1. मिश्र, डॉ. भगीरथ, *काव्यशास्त्र,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी,2007 ,पृष्ट. सं.79
2. मिश्र, डॉ. भगीरथ, *काव्यशास्त्र,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी,2007,पृष्ट. सं.79
3. पुष्पा, मैत्रेयी, *अल्मा कबूतरी,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृति-2011, पृष्ट. सं. 374
4. पुष्पा, मैत्रेयी, *अल्मा कबूतरी,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृति-2011, पृष्ट. सं. 162
5. पुष्पा, मैत्रेयी, *अल्मा कबूतरी,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृति-2011, पृष्ट. सं. 11
6. पुष्पा, मैत्रेयी, *विजन,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2002, पृष्ट. सं. 119
7. पुष्पा, मैत्रेयी, *विजन,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2002, पृष्ट. सं. 168
8. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट. सं. 336
9. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट. सं. 177
10. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट. सं. 185
11. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट. सं. 350
12. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट. सं. 172
13. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट. सं. 172

14. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट. सं. 417

15. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट. सं. 412

16. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट. सं. 417

17. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट. सं. 156

18. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट. सं. 328

19. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट. सं. 417

20. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट. सं. 417

21. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट. सं. 19

22. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट. सं. 21

23. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट. सं. 21

24. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ*, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट. सं. 68

25. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ*, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट. सं.104-105

26. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ*, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट. सं.90-91

27. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ*, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट. सं.106

28. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ*, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट. सं.223

29. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ*, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट. सं.224

30. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ*, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट. सं.320

31. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ*, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट. सं.363

32. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ*, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट. सं.362

33. चौधुरी, रीता, *पपीया तरार साधु*, केम्ब्रिज इंडिया, गुवाहाटी, 1998, पृष्ट. सं. 144

34. चौधुरी, रीता, *पपीया तरार साधु*, केम्ब्रिज इंडिया, गुवाहाटी, 1998, पृष्ट. सं. 148

35. चौधुरी, रीता, *पपीया तरार साधु*, केम्ब्रिज इंडिया, गुवाहाटी, 1998, पृष्ट. सं. 212

36. चौधुरी, रीता, *पपीया तरार साधु,* केम्ब्रिज इंडिया, गुवाहाटी, 1998, पृष्ट. सं. 224

37. चौधुरी, रीता, *पपीया तरार साधु,* केम्ब्रिज इंडिया, गुवाहाटी, 1998, पृष्ट. सं. 40

38. चौधुरी, रीता, *पपीया तरार साधु,* केम्ब्रिज इंडिया, गुवाहाटी, 1998, पृष्ट. सं. 305

39. चौधुरी, रीता, *पपीया तरार साधु,* केम्ब्रिज इंडिया, गुवाहाटी, 1998, पृष्ट. सं. 307

40. चौधुरी, रीता, *एइसमय सेइ समय,* वनलता प्रकाशन, गुवाहाटी, 2007, पृष्ट. सं. 195

41. चौधुरी, रीता, *एइसमय सेइ समय,* वनलता प्रकाशन, गुवाहाटी, 2007, पृष्ट. सं. 144

42. चौधुरी, रीता, *एइसमय सेइ समय,* वनलता प्रकाशन, गुवाहाटी, 2007, पृष्ट. सं. 112

43. चौधुरी, रीता, *एइसमय सेइ समय,* वनलता प्रकाशन, गुवाहाटी, 2007, पृष्ट. सं. 184

44. चौधुरी, रीता, *एइसमय सेइ समय,* वनलता प्रकाशन, गुवाहाटी, 2007, पृष्ट. सं. 371

45. चौधुरी, रीता, *एइसमय सेइ समय,* वनलता प्रकाशन, गुवाहाटी, 2007, पृष्ट. सं. 252

46. चौधुरी, रीता, *मायाबृत्त,* ज्योति प्रकाशन, पानबाजार, गुवाहाटी, 2012, पृष्ट. सं. 83

47. चौधुरी, रीता, *मायाबृत्त,* ज्योति प्रकाशन, पानबाजार, गुवाहाटी, 2012, पृष्ट. सं. 426

48. चौधुरी, रीता, *मायाबृत्त,* ज्योति प्रकाशन, पानबाजार, गुवाहाटी, 2012, पृष्ट. सं. 466

49. चौधुरी, रीता, *मायाबृत्त,* ज्योति प्रकाशन, पानबाजार, गुवाहाटी, 2012, पृष्ट. सं. 478

50. चौधुरी, रीता, *मायाबृत्त,* ज्योति प्रकाशन, पानबाजार, गुवाहाटी, 2012, पृष्ट. सं. 446

51. पुष्पा, मैत्रेयी, *सुनो मालिक सुनो,* वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली, 2006, पृष्ट. सं. 226